सुखी कौन ?

लेखक एवं प्रकाशक

धर्मपाल कपूर

बी०ए० ऑनर्स, एम०ए०

कोठी नं. 1135, सैक्टर 11

पंचकूला-134112 (हरियाणा)

फोन : 0172-2567845

मोबाइल : 9356301618

संस्करण : 2019
प्रतियाँ : 1000

धर्मपाल कपूर
बी.ए. ऑनर्स, एम.ए.
कोठी नं. 1135, सैक्टर 11
पंचकूला-134112 (हरियाणा)
फोन : 0172-2567845
मोबाइल : 9356301618

टंकण एवं साजसज्जा : **अभिनव इंटरप्राइजिज, मो. 94683 40497, 81684 90221**
मुद्रक :

दो शब्द

भद्र आत्माओ !

He who is contented and calm is happy.

–Swami Vivekananda

वह जो सन्तुष्ट एवं शांत है वही सुखी है

मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि मैंने सुखी कौन ? नामक पुस्तक अनेक ग्रंथों के अध्ययन एवं अनुशीलन के पश्चात् सच्ची लगन एवं कड़ी मेहनत के पश्चात् लिखी है । संसार में सब प्रकार के व्यक्ति हैं, परन्तु प्रत्येक व्यक्ति जीवन में सुख, शांति एवं आनन्द चाहता है । सच्चे सुख की प्राप्ति के लिये प्रस्तुत पुस्तक में 5 प्रकार के सुखों का वर्णन किया गया है–भोगसुख, दानसुख, ज्ञानसुख, ध्यानसुख एवं सच्चासुख । इसके अतिरिक्त शारीरिक विकास, आर्थिक वृद्धि, आत्मिक उन्नति और गुणग्राही कैसे बने आदि का भी उल्लेख किया गया है । सुखी जीवन के लिये उत्तम स्वभाव को अपनाना सुखी जीवन के रहस्य, तनाव मुक्त जीवन के सूत्रों को भी बताया गया है ।

अंत में साकारात्मक सोच, सदा प्रभु की रजा में रहना, वर्तमान में रहना, यह कहना कि प्राप्त ही पर्याप्त है आदि विभिन्न सूत्रों पर भी प्रकाश डाला गया है । इस प्रकार प्रस्तुत पुस्तक में बताया गया है कि आजकल तनावयुक्त एवं भौतिकवादी जीवन में कौन सच्चे अर्थों में सुखी है ? कृपया आप प्रस्तुत पुस्तक का अययन ध्यानपूर्वक कीजिये आप को अपने जीवन में सुख, शांति एवं आनन्द की वृद्धि होगी, ऐसा मेरा आत्मविश्वास है । इन विषयों का एक खूबसूरत संग्रह मैं आपकी सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ । लीजिए, अब आप भी इस ज्ञानवर्धक पुस्तक 'सुखी कौन ?' के ज्ञानवर्धक पृष्ठों को देखिए और पढ़ कर आनन्द विभोर हो जाइए ।

प्रस्तुत पुस्तक के लिखने में मुझे सर्वश्री लालचंद चौहान जी, रोशन लाल अग्रवाल जी, नरेश बंसल जी, जय किशन जी आदि ने सहयोग प्रदान किया है । अतः इन मित्रों का स्तवन न करना मेरी कृतघ्नता होगी । श्री लालचंद चौहान जी ने इस पुस्तक के सम्पादन में विशेष योगदान दिया है ।

मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि इनके बिना प्रस्तुत पुस्तक का वर्तनान रूप में संयोजन न हो पाता। मैं उन सभी लेखकों एवं कृतिकर्ताओं का भी अत्यंत धन्यवादी हूँ जिनकी कृतियों से मैंने संदर्भ उद्धृत किये हैं।

वस्तुतः बोलना सरल है परन्तु लिखना अत्यधिक कठिन है। जैसे संस्कृत में एक उक्ति प्रसिद्ध है–

शतं वद एकं मा लिख

अर्थात् सौ बार कहो परन्तु एक बार भी मत लिखो। क्योंकि लेखन में यदि कोई त्रुटि रह जाये तो वह तुरन्त पकड़ी जाती है और लेखक की पोल खुल जाती है। अतः मैंने प्रस्तुत पुस्तक के लिखने में पूर्ण सावधानी बरती है। परन्तु संसार का प्रत्येक व्यक्ति अल्पज्ञ एवं अपूर्ण है। अतः कोई भी त्रुटि रह गई हो तो पाठकों से अनुरोध है कि उस त्रुटि को लिखकर निम्नलिखित पते पर भेजें ताकि भविष्य में उसे सुधारा जा सके। मैं इसके लिये आपका धन्यवादी हूँगा।

धर्म पाल कपूर

दिनांक : 6.2.2019

(धर्मपाल कपूर)
बी.ए. ऑनर्स, एम.ए.
कोठी नं. 1135, सैक्टर 11,
पंचकूला-134112 (हरियाणा)
फोन : 0172-2567845
मोबाइल : 9356301618

निवेदन

सुखी कौन? यह एक गूढ़ एवं विचारणीय विषय है। सब सुख चाहते हैं,दुःख कोई नहीं चाहता। दुःखों को न चाहते हुए भी दुःख क्यों आते हैं? यह बात समझने और जीवन में अपनाने की अति आवश्यकता है। सबसे पहले यह जानना अति आवश्यक है कि दुःखों का कारण क्या है? जब तक दुःखों के कारण का पता नहीं होगा, तब तक दुःखों से मुक्ति नहीं मिल सकती। ठीक, जैसे डॉक्टर जब तक बीमारी का पता नहीं लगा लेता तब तक उसका इलाज नहीं कर सकता। इसलिये दुःख के कारण का जानना परमावश्यक है। महर्षि गौतम 'न्याय दर्शन' में इसका कारण बताते हैं। दुःख से सम्बन्धित पाँच पदार्थों का वर्णन उनके द्वारा किया गया है। दुःख, जन्म प्रवृत्ति, दोष और मिथ्या ज्ञान। इनमें अगला पदार्थ अपने से पहले का कारण है। इस प्रकार से दुःख का कारण जन्म, जन्म का कारण प्रवृत्ति, प्रवृत्ति का कारण दोष, दोष का कारण मिथ्याज्ञान है। यह एक तर्क पूर्ण व्यवस्था है कि कारण के नाश हो जाने पर कार्य का भी नाश हो जाता है।

महर्षि गौतम ने बताया कि दुःख का कारण जन्म है, यदि जन्म न होगा तो कोई दुःख भी नहीं होगा, बिना जन्म के प्रवृत्ति का अभाव होगा। जब प्रवृत्ति नहीं होगी तो दोष भी नहीं होंगे, जब दोष नहीं तो मिथ्याज्ञान भी नहीं होगा, क्योंकि सब दुःखों की जड़ मिथ्याज्ञान है। मिथ्याज्ञान से दोषों की उत्पत्ति होती है, दोषों से प्रवृत्ति बनती है। प्रवृत्ति के अनुसार जन्म होता है और जन्म के कारण किये पापों का फल दुःख होता है। जो जन्म लेने पर भोगने पड़ते हैं। दुःखों से मुक्ति पाने का उपाय क्या है?

सब दुःखों की जड़ मिथ्याज्ञान है। जब मिथ्याज्ञान वेदविद्या से दूर हो जायेगा और आत्मा और परमात्मा का सच्चा ज्ञान हो जायेगा, तब दोष दूर हो जाएंगे। जब दोष नहीं रहेंगे तो प्रवृत्ति का अभाव हो जायगा। जब प्रवृत्ति का प्रभाव होगा, तो जन्म नहीं होगा। जब जन्म नहीं होगा तो दुःख भी नहीं होगा अर्थात् मोक्ष प्राप्त हो जायेगा।

जीवन में दो बातें बड़ी ही महत्त्वपूर्ण हैं । स्वास्थ्य और अर्थ । संसार के सारे सुख भोग की गाड़ी इन दो पहियों पर चलती है । यदि इनमें से किसी एक के अभाव में जीवन रूपी डगमगा जाती है, या रुक जाती है ।

1. स्वास्थ्य – इसकी रक्षा बहुत आवश्यक है । क्योंकि सारे कार्य स्वास्थ्य व्यक्ति द्वारा ही किये जाने सम्भव है । स्वास्थ्य ठीक नहीं तो मनुष्य कुछ भी नहीं कर सकता । स्वास्थ्य को ठीक रखन के लिये निम्नलिखित बातों का पालन करें । व्यायाम–प्रातःकाल उठ कर सैर करे और व्यायाम करे । प्राणायाम एवं ईश्वर का चिन्तन अर्थात् ईश्वर के गुणों का गुणगान करें । सात्विक शुद्ध भोजन खायें । अपने कार्यों को ईमानदारी व पूर्ण पुरुषार्थ के साथ करें । शुद्ध व्यवहार, सबसे प्रेमपूर्वक वर्ताव करें । जो इन बातों का कठोरता से पालन करता है, वह निश्चय ही सुख पाता है ।

2. अर्थ – आज सारा संसार साधारणतः सारी शक्ति का उपयोग अर्थों के अर्जन (संग्रह) में करता है । यह आवश्यक भी है क्योंकि इसकी आवश्यकता बच्चे के गर्भ में आने से मृत्यु तक पड़ती है । ईश्वर ने धन अर्जन के लिय मना नहीं किया है । पुरुषार्थ से कमाया गया धन ही अर्थ है और बेइमानी, छल-कपट, रिश्वत आदि से एकत्रित किया धन अनर्थ हैं सब जानते हैं अनर्थ तो अनर्थ ही होता है । जो अर्थ का अर्जन पूर्ण पुरुषार्थ से करता है और उस धन से कुछ भाग दूसरों के परोपकारार्थ लगाता है उसको ईश्वर किसी प्रकार की कमी नहीं रखता । जिसके पास पुण्य धन है, वही सुखी हैं पाप धन तो नींद हराम कर देता है ।

श्री धर्मपाल कपूर जी ने सुखी कौन? पुस्तक में दिये विषयों से सम्बन्धित सभी विषयों पर प्रकाश डालने का अथक प्रयास किया है । ये स्वाध्यायशील तो हैं ही, इसके साथ ही अपने स्वाध्याय से प्राप्त किये ज्ञान को पुस्तकों में संग्रह करके निःशुल्क परोपकारी भावना से वितरित करते हैं । उनके ऊपर यह ईश्वर की असीम कृपा है कि 84 वर्ष की आयु में भी वह इतना परिश्रम और पुरुषार्थ का कार्य करते हैं । मैं ईश्वर से उनकी दीर्घायु एवं निरोगता के लिए प्रार्थना करता हूँ ।

सुखी कौन? पुस्तक में श्री धर्मपाल कपूर जी ने बड़े ही सुनिश्चित ढंग से सभी प्रकरणों का बड़ी विद्वता व प्रभुप्रदत ज्ञान से विश्लेषण किया है। वह इसके लिए प्रशंसा के पात्र हैं। उनके द्वारा इस पुस्तक के कुछ बिन्दु उद्धृत करना आवश्यक है। पुस्तक में निम्नलिखित पाँच सुखों का वर्णन किया गया है।

(1) भोगसुख – भोग का सुख क्षणिक सुख है। भूख लगी, भोजन कर लिया, सुख मिला परन्तु कुछ ही घंटे के बाद सुख खत्म हो जाता है और भूख सताने लगती है। इसी प्रकार काम वासना आदि का क्षणिक सुख है।

(2) दानसुख – दान देने से आत्मा में प्रसन्नता होती है, इसका फल ईश्वर सुख के रूप में देता है। दान दूसरों का परोपकार होता है और ईश्वर ने हमारा शरीर दूसरों के परोपकारार्थ ही दिया है न कि केवल अपना हित साधने के लिये।

(3) ज्ञानसुख – ज्ञान से मनुष्य पाप कर्मों से बच जाता है क्योंकि मनुष्य बहुत से पाप अज्ञानता के कारण करता है, और कुछ जानते हुए भी करता है। चोर जानता है कि चोरी बुरा कर्म है, परन्तु फिर भी करता है। सुखी जीवन जीने के लिये ज्ञान अति आवश्यक है। अज्ञानता पाप कर्मों को जन्म देती है।

(4) ध्यानसुख – ईश्वर में ध्यान लगाने से सुख-शान्ति का अनुभव होता है, परन्तु ध्यान हट जाने पर फिर मनुष्य अपनी दिन भर की गतिविधियों का संचालन करने में व्यस्त हो जाता है।

(5) सच्चासुख – सच्चा सुख तो परमपिता परमात्माके सानिध्य में मिलता है। परमात्मा का सानिध्य कब प्राप्त होता है जब समाधि सिद्ध हो जाती है। समाधि कब सिद्ध होती है जब सारे पाप कर्म दग्ध हो जाते हैं। यही सच्चा सुख अर्थात् आनन्द हैं सुख तो उक्त चार में भी है, परन्तु आनन्द नहीं है। आनन्द केवल मुक्त आत्मा को प्राप्त होता है और आनन्द केवल परमात्मा के पास है अन्य किसी पदार्थ के भोग में नहीं है।

जब तक मनुष्य का शरीर स्वस्थ नहीं तब तक उसको अन्य सुखों की प्राप्ति नहीं हो सकती। सभी कार्य व भोग शरीर के माध्यम से किये व भोगे जाते हैं। इसलिये ईश्वर ने इतना सुन्दर शरीर आप को दिया है, उसका पालन पोषण ऋषि, मुनियों आदि के बतलाये वेद मार्ग पर चला कर करें, तभी सुखी जीवन को पायेगा और वही सुखी होगा जो ईश्वर के नियमों की पालना करेगा और उसकी आज्ञा का पालन करेगा।

मेरा यह अटूट विश्वास है कि यह पुस्तक पाठकों का सुखी जीवन यापन करने का मार्ग प्रदर्शित अवश्य करेगी, यदि इसे ध्यानपूर्वक पढ़ कर अपने व्यवहार में उतारा जाये।

मैं श्री धर्मपाल कपूर जी का धन्यवादी हूँ कि जो उन्होंने अपनी पुस्तक सम्पादन हेतु मुझे यह कार्य सौंपा। मैं कोई विद्वान् तो नहीं हूँ। ईश्वर कृपा से जो ज्ञान मुझे मिला है उसके अनुसार मैंने यह कार्य करने का प्रयास किया। अल्पज्ञता के कारण स्वाभाविक है और त्रुटि रह गई होगी उसके लिये क्षमा चाहूँगा।

लाल चन्द चौहान
से.नि. राज्य विकास अधिकारी,
कोठी नं. 591, सैक्टर 12,
पंचकूला-134112 (हरियाणा)
मोबाइल : 8557057170
मोबाइल : 7508201740

विशेष सूचना

1. स्वाध्याय, मनन और आत्मसात् ।
2. पाठकगण पुस्तक पढ़ने के पश्चात् किसी भी स्वाध्यायशील मित्र को इसे देने की कृपा करें ।
3. कोई भी जिज्ञासु अपनी इच्छानुसार इसकी प्रतियाँ फोटोस्टेट करवा कर स्वाध्यायशील मित्रों में प्रचार-प्रसार के लिये बाँट सकता है ।
4. पुस्तक केवल प्रचारार्थ लिखी गई है और सदुपयोग ही इसका मूल्य है ।
5. सर्वाधिकार लेखकाधीन ।

धर्मपाल कपूर
बी.ए. ऑनर्स, एम.ए.
कोठी नं. 1135, सैक्टर 11,
पंचकूला-134112 (हरियाणा)
फोन : 0172-2567845
मो० : 9356301618

विषयसूची

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ
1.	भोगसुख	1
2.	दानसुख	5
3.	ज्ञानसुख	6
4.	ध्यानसुख	8
5.	सच्चासुख	9
6.	शारीरिक विकास	20
7.	आर्थिक प्रगति	33
8.	आत्मिक उन्नति	43
9.	आस्तिक बुद्धि	60
10.	गुणग्राही बनना	63
11.	उत्तम स्वभाव	68
12.	जीवन उपयोगी सामान्य बातें	75
13.	तनाव मुक्त जीवन के सूत्र	83
14.	सुखी कौन ?	87

1. भोगसुख

धनहीन कहे धनवान सुखी, धनवान कहे सुख राजा को भारी।
राजा कहे चक्रवर्ती सुखी, चक्रवर्ती कहे सुख इन्द्र को भारी।।
इन्द्र कहे चतुरानन सुखी, चतुरानन कहे विष्णु को सुख भारी।
तुलसीदास विचारि कहे, प्रभु भक्ति बिन सब लोक दुखारी।।

—तुलसीदास

संसार में विभिन्न विचारधारा के व्यक्ति हैं। अतः अनेक विचार समस्याएं, पंथ एवं ग्रंथ हैं। प्रत्येक व्यक्ति का पृथक्-पृथक् अस्तित्व, व्यक्तित्व एवं कृतित्व है। परन्तु सबकी चाहना एक ही है अर्थात् सुख, शान्ति और आनन्द। सुख मिलता है, भोग से, शांति मिलती है योग से और आनन्द मिलता है निष्काम भक्ति से क्योंकि सुख शरीर का, शांति मन का और आनन्द परमात्मा का विषय है। अर्थात् आनन्द परमात्मा का पर्यायवाची शब्द है। हम केवल सुखी होना ही नहीं चाहते, बल्कि दूसरों से अधिक सुखी होना चाहते हैं। इसलिए दुःखी हैं। इस संसार में निम्नलिखित पांच प्रकार के सुख हैं।

इसको शारीरिक, राजसी, तामसी सुख एवं जड़ संयोगजन्य सुख भी कहा गया है। ये सांसारिक विषय भोगों के सुख हैं। परन्तु ये सब भोग सुख निम्नस्तर के सुख हैं क्योंकि इसमें सदा दुःख भी जुड़ा रहता है और दूसरे ये क्षणिक होते हैं। जैसे व्यक्ति को रूप, रस, गंध और स्पर्श क्षणिक सुख तो मिलता परन्तु बाद में दुःख मिलता है। ये सब मानसिक सुख कहलाते हैं। जैसे संत शिरोमणि तुलसीदास ''रामचरितमानस'' में लिखते हैं—

बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ ग्रंथन्हि गावा।
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सँवारा।
सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहिं कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोस लगाइ।।
एहि तन कर फल विषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाईं।
नर तनु पाइ विषयँ मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ विष लेहीं।।

—उत्तरकाण्ड (42.4, 43.1)

तुलसीदास जी कहते हैं कि यह मानव शरीर बड़े भाग्य से मिला है। सब ग्रंथों ने यही कहा है कि यह शरीर देवताओं को भी दुर्लभ है। यह साधन का धाम और मोक्ष का द्वार है। अतः इसे पाकर भी जिसने परलोक नहीं सुधारा। वह व्यक्ति परलोक में दुःख पाता है और सिर पीट कर पछताता है और अपना दोष न समझकर काल, कर्म और प्रभु पर मिथ्या दोष लगता है। हे भाई! इस शरीर से प्राप्त होने का फल विषयभोग नहीं है। इस संसार के भोगों की बात ही क्या स्वर्ग (सुख) का भोग भी बहुत थोड़ा है और अंत में दुःख देने वाला है। अतः जो व्यक्ति मानव शरीर पाकर इसे विषयों में मन लगा देते हैं वे मूर्ख अमृत को छोड़कर विष को ग्रहण कर लेते हैं। अतः भक्त शिरोमणि कबीर ने लिखा है–

झूठे सुख को सुख कहे मानत है मद मोद।

जगत चबेना काल का, कुछ मुख में, कुछ गोद।।

परन्तु फिर भी संसार के अधिकाँश व्यक्ति भोगसुख को ही वास्तविक सुख समझते हैं। जैसे अकबर इलाहाबादी लिखते हैं–

हे हबीब! (दोस्त) क्या कार-ए-नुमाया (विशेष काम) कर गये।
बी.ए. हुये, नौकर हुये पैंशन मिली और मर गये।।

अतः हम देखते हैं कि इन भोगसुखों का वर्णन एक कवि ने निम्नलिखित पंक्तियों में किया है–

पहला सुख निरोगी काया,
दूसरा सुख घर होवे माया।
तीसरा सुख सुशीला नारी,
चौथा सुख पुत्र आज्ञाकारी।
पाँचवाँ सुख राज्य में पासा (उत्थान),
छइवाँ सुख सुस्थान वासा (निवास स्थान)।
सातवाँ सुख संतोषी वासा (मन)।

परन्तु ये सारे भोगसुख हैं जोकि निम्न स्तर के हैं और क्षणिक हैं अथवा अस्थाई हैं। इन सब सुखों के साथ दुःख भी जुड़े हैं। इन सुखों में सब से बड़ा संतोषसुख है। संतोष शब्द की व्युत्पत्ति सम+तोष से हुई है जिसका भाव है समान रुचि। इसका भाव यह है कि वर्तमान परिस्थिति से संतुष्ट रहना

अथवा पुरुषार्थ से जो प्राप्त हो उसमें सन्तुष्ट रहना और इसको बेहतर बनाने के लिये निरन्तर प्रयत्न करते रहना। अतः व्यक्ति को जीवन में सदा संतोष रखना चाहिये क्योंकि संतोष से ही सच्ची शांति एवं सुख मिलता है। तभी कहा गया है कि संतोषी सदा सुखी लोभी सदा दुःखी। जैसे कबीर ने भी कहा है–

गोधन, गजधन, बाजधन और रतन धन खान।
जब आवै संतोष धन, सब धन धुरि समान।।

परन्तु आचार्य चाणक्य लिखते हैं–

संतोषस्त्रिषु कर्त्तव्य स्वदारे भोजने धने।
त्रिषु चैव न कर्त्तव्योऽध्ययने, तप-दानयोः।। चाणक्यनीति 7.61

तीन स्थानों पर संतोष करना चाहिए। अपनी स्त्री, अपना भोजन और अपने धन पर परन्तु तीन स्थानों पर संतोष नहीं करना चाहिये। शास्त्रों के अध्ययन, तप और दान में अर्थात् इनको जितना हो सके बढ़ाओ। सन्तोष के विषय में आप की सेवा में एक दृष्टांत प्रस्तुत करता हूँ कि एक गाँव में एक गरीब आदमी रहता था। वह बहुत मेहनत करता, किन्तु फिर भी वह आवश्यकतानुसार धन न कमा पाता। एक दिन उसे एक महात्मा जी मिले। उसने महात्मा जी की खूब सेवा की। महात्मा जी उसकी सेवा से प्रसन्न हो गए और उसे भगवान् की आराधना का एक मंत्र दिया। मंत्र से कैसे प्रभु का स्मरण किया जाए, उसकी पूरी विधि भी महात्मा जी ने उसे बता दी। आदमी उस मंत्र से भगवान् का स्मरण करने लगा। कुछ दिन मंत्राराधना करने पर देवी उसके सामने प्रकट हुई। देवी ने उससे कहा, ''मैं तुम्हारी आराधना से प्रसन्न हूँ''। बोलो क्या चाहते हो?''

आदमी बोला, ''देवी जी, इस समय तो नहीं, हाँ मैं कल आप से माँग लूँगा।'' देवी कल प्रातः आने के लिए कहकर अंतर्ध्यान हो गई।

घर जाकर आदमी सोच में पड़ गया कि देवी से क्या मांगा जाए? उसके मन में आया कि रहने के लिए घर नहीं है, इसलिए वही मांगा जाए। ये जमींदार लोग गाँव के सब लोगों पर रौब गाँठते हैं, इसलिए देवी से वर माँगकर मैं जमींदार हो जाऊँ तो अच्छा रहे। यह विचार कर उसने जमींदार मांगने का निर्णय कर लिया। इस विचार के आने के बाद वह सोचने लगा कि

जब लगान भरने का समय आता है, तब ये जमींदार भी तो तहसीलदार साहब की मिन्नतें करते हैं । इस प्रकार इन जमींदारों से बड़ा तो तहसीलदार ही है, इसलिए जब बनना ही है तो बड़ा तहसीलदार क्यों न बन जाऊँ ?

इस प्रकार वह तहसीलदार बनने की इच्छा करने लगा । अब वह इस निर्णय से खुश था लेकिन उसके मन में विचार समाप्त नहीं हुए और कुछ देर बाद उसे जिलाधीश का ध्यान हो आया । वह सोचने-विचारने में ही इतना फंस गया कि कुछ तय नहीं कर पाया कि क्या मांगा जाए । इस तरह तो दिन बीता ही, रात भी बीत गई ।

दूसरे दिन सवेरा हुआ । वह अभी भी कुछ निर्णय नहीं कर पाया था । ज्यों ही सूरज की पहली किरण पृथ्वी पर पड़ी त्यों ही देवी उसके सामने प्रकट हो गई । उन्होंने पूछा, ''बोलो, अब क्या चाहते हो? अब तो तुमने सोच-विचार कर निश्चय कर लिया होगा कि क्या मांगना है ?''

उसने हाथ जोड़कर उत्तर दिया, ''देवी, मुझे कुछ नहीं चाहिए । मुझे तो केवल भगवान् की भक्ति और आत्म-संतोष का गुण दीजिए ।''

देवी ने पूछा, ''क्यों भई, तुमने धन-दौलत क्यो नहीं मांगी ?''

वह विनम्रता से बोला, ''देवी, मेरे पास दौलत नहीं आई । बस आने की आशा मात्र हुई तो मुझे उसकी चिंता से रात भर नींद नहीं आई । यदि वास्तव में मुझे दौलत मिल जाएगी, तो फिर नींद तो एकदम विदा ही हो जाएगी । इसलिए मैं जैसा हूँ, वैसा ही रहना चाहता हूँ । आत्म संतोष का गुण ही सबसे बड़ी दौलत होती है । आप मुझे यही दीजिए । साथ ही संसार सागर पार करने के लिए भगवान् नाम के स्मरण का गुण दीजिए ।'' देवी ने उसे आशीर्वाद दे दिया । वह व्यक्ति पहले की तरह प्रसन्नता से जीवन बिताने लगा । यह एक उदाहरण है वास्तविकत घटना नहीं है, काल्पनिक है ।

2. दानसुख

यह आत्मिक, सात्विक, जड़ चेतनसंयोगजन्य सुख भी कहा जाता है। अतः आत्मिक उन्नति के लिये प्रत्येक व्यक्ति को अपने सामर्थ्य के अनुसार जरूरतमंद व सुपात्र को अवश्य दान देना चाहिए। जैसे यक्ष ने युधिष्ठिर से पूछा था – **मरने के बाद क्या साथ जाता है?**

इस पर युधिष्ठिर ने उत्तर दिया– **मरने के पश्चात् दान साथ जाता है।**

अतः दान को भोगों से उच्च स्तर का सुख माना जाता है। इसके विषय में एक दृष्टांत आपकी सेवा में प्रस्तुत करता हूँ–

एक गाँव मे पंडित रहता था। उसे सपने में भगवान् ने दर्शन दिए और कहा कि तुम्हारे सारे काम बहुत जल्द ही पूरे होंगे। जब पंडित की आँख खुली तो यह बात उसने अपनी पत्नी लीला को बताई। पंडित बहुत ही खुश था लेकिन वह यह नहीं जानता था कि उसे क्या करना है जिससे उसके काम पूरे होंगे। अगले दिन पंडित के यहाँ एक साधु आए और उन्होंने भिक्षा मांगी। पंडित ने आवाज़ सुनी और बाहर आया। देखा कि बाहर साधु महाराज खड़े हैं।

साधु को देख पंडित ने कहा, ''बाबा, आगे जाएं। हमने अभी तक भोजन भी नहीं बनाया है जो आपको हम दे सकें। यह कहकर पंडित ने दरवाजा बंद कर दिया। जब रात हई तो पंडित को सपना आया और सपने में भगवान् ने दर्शन दिए। पंडित ने सपने में कहा, ''भगवान्, मेरे सभी काम केसे पूरे होंगे?'' तब भगवान् ने कहा, ''तुम्हारे अंदर तो लोभ की भावना छिपी है। तुम किसी को दान नहीं देते हो जब कि कल तुम्हारे घर पर एक साधु महाराज आए थे और तुमने उन्हें भी वापस लौटा दिया।'' भगवान् की बात सुनकर पंडित ने क्षमा मांगी और फिर प्रार्थना की कि अब से ऐसा नहीं होगा। जब पंडित की आँख खुली तो सुबह हो चुकी थी और उसके घर में बहुत सारा सोना रखा हुआ था जिसे देख कर पंडित खुश हो गया। अब पंडित का जीवन सफल हो गया था।

3. ज्ञानसुख

दानसुख से भी उच्च स्तर का सुख ज्ञानसुख है। अतः व्यक्ति को धार्मिक रहना चाहिए। इसकी प्राप्ति के लिये अच्छे-अच्छे धार्मिक ग्रंथों जैसे वेद, उपनिषद्, रामायण, गीता, सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ऋषिकृत सद्ग्रंथों का स्वाध्याय करना चाहिए। इसके विषय में आपकी सेवा में एक दृष्टांत प्रस्तुत करता हूँ।

बहुत समय पहले की बात है कि एक राजा एक घने जंगल में शिकार कर रहा था। तभी अचानक तेजी से बारिश होने लगी और हवा भी बहुत तेज़ चलने लगी। कुछ देर बाद बारिश बंद हो गई तो राजा ने देखा कि कोई भी सैनिक उसके साथ नहीं है और वह उनसे बिछुड़ गया था। घने जंगल में पैदल चलने के कारण राजा को बहुत तेज भूख और प्यास लग गई थी। वह बहुत परेशान हो गया। तभी उसे 3 लड़के आते दिखाई दिए। उसने उनको बुलाया और बोला, ''मुझ को बहुत तेज भूख और प्यास लगी है, क्या यहाँ मुझको खाना और पानी मिलेगा?'' लड़कों ने कहा, ''क्यों नहीं जरूर मिलेगा।'' वे भाग कर अपने घर गए और राजा के लिए पानी और खाना लेकर आ गए।

खाना खाने के बाद राजा ने बताया, ''मैं एक राजा हूँ और तुम लोगों से बहुत खुश हूँ। तुमको जो माँगना है माँग लो।'' पहले ने कहा, ''मुझको ढेर सारा धन चाहिए ताकि ठीक ढंग से अपने परिवार का निर्वाह कर सकूँ।''

राजा बोला, ''मैं तुमको धन दे दूँगा।''

फिर दूसरा लड़का बोला, ''मुझको घोड़ा और बंगला चाहिए।''

राजा बोला, तुमको भी मिल जाएगा।''

फिर तीसरे लड़के ने कहा, ''महाराज मुझको तो ज्ञान चाहिए और कुछ नहीं।'' राजा ने उस लड़के के लिए एक अध्यापक नियुक्त कर दिया और वह लड़का पढ़-लिखकर राजा के यहाँ मंत्री बन गया।

काफी समय बाद राजा को अपनी पुरानी जंगल वाली बात याद आई तो उसने उन तीनों लड़कों से भी मिलना चाहा। रात को राजा ने सबको खाने पर बुलाया और सबसे पूछा कैसे हो तो पहले वाले ने कहा, ''मैं तो कंगाल हो गया हूँ सारा धन खत्म हो गया।'' फिर राजा ने दूसरे लड़के से पूछा। उसने भी कहा, ''मेरा तो कुछ धन चोरी हो गया और बहुत ही कम बचा है जो खत्म हो जाएगा।'' फिर राजा ने अपने मंत्री यानी तीसरे लड़के से पूछा तो वह बोला, ''महाराज मैंने तो आप से ज्ञान मांगा था, मेरा तो ज्ञान दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।'' अपने दोस्त की यह बात सुनकर उन दो लड़कों को बहुत अफसोस हुआ। इस कहानी से हमें यही सीख मिलती है कि ज्ञान से बड़ा कोई धन नहीं है जो कि बाँटने पर और भी अधिक बढ़ता है। जैसे कविवृन्द ने कहा है–

सरस्वती के भण्डार की बड़ी अपूर्व बात।
ज्यों ज्यों खर्चे त्यों त्यों बढ़े बिन खर्चे घट जात।।

4. ध्यानसुख

सांसारिक सुखों में यह सर्वश्रेष्ठ सुख माना गया है। परन्तु साधारण व्यक्ति का ध्यान नहीं लगता। परन्तु यदि वह पहले यम, नियम का पालन करेगा तो फिर निरन्तर अभ्यास करने से ध्यान लग जायेगा। जैसे महर्षि कपिल लिखते हैं–

ध्यानं निर्विषयं मनः सांख्यदर्शन 6.25

जब तक मन विषय रहित नहीं हो जाता तब तक ध्यान नहीं लग सकता। ध्यान के लग जाने से साधक असीम साधना की अवस्था में भाव विभोर होकर गुनगुनाता है–

हो जाए बंद आँखें प्रभु ध्यान करते करते
अमृत बहाए वाणी गुणगान करते-करते।
दिव्य ज्योति हो निराली
ब्रह्मधाम घर हो मेरा
जब जाए प्राण तन से
प्रभु नाम रटते-रटते
हो जाए बंद आँखें प्रभु ध्यान करते-करते।

ध्यान क्या है? ईश्वर में मन को एकाग्र करके चिन्तन मनन करना ध्यान कहलाता है। ईश्वर में ध्यान लगाने के बाद यदि ऐसा अनुभव हो कि मैं कितनी देर ध्यान में बैठा तो समझो विचार चलते रहे अर्थात् मन विचलित रहा तो वह ध्यान न था। यदि आश्चर्य हो कि इतना समय जल्दी बीत गया तो समझो ध्यान था। ईश्वर में ध्यान लगने से बाहरी पदार्थों का ज्ञान नहीं रहता, वही ध्यान सुख है, ध्यान हटते ही मन सांसारिक सुख सुविधाओं की ओर भागने लगता हैं चित्तवृतियों का रोकना ही ध्यान लगाना है। चित्तवृतियों का निरोध ही योग है।

5. सच्चासुख

इसको आनन्द या प्रेमानंद या ब्रह्मानन्द, चेतन संयोगजन्य सुख भी कहा जाता है। एक तो यह स्थायी होता है और दूसरे यह सदा बढ़ता रहता है। विश्वकोष का अध्ययन एवं अनुशीलन करने के उपरांत प्रतीत होता है कि केवल संसार एक आनन्द (Bliss) शब्द ही है जिसका विलोम नहीं है। वस्तुतः आनन्द परमात्मा का पर्यायवाची शब्द है। अतः प्रभु शरणागति में ही सच्चे आनन्द की प्राप्ति होती है।

यदि किसी भाग्यशाली व्यक्ति को ऊपर लिखित पाँच प्रकार के सुख मिल भी जाये परन्तु यदि उस व्यक्ति के प्रियजन जैसे माता-पिता, भाई-बहन, पति या पत्नी, पुत्र, पुत्री आदि उसका प्रवेश देश, अनुकूल नहीं है तो भी वह सुखी नहीं हो सकता जैसे महर्षि दयानंद फरुखाबाद गंगातट पर समाधि लगाये बैठे थे तो उसी समय एक महिला अपने मृतक बच्चे को अपनी आधी धोती में लपेटकर लाई और उसे गंगा में बहा दिया फिर आधी धोती अपने तन पर लपेट ली। महर्षि ने यह सारा दृश्य देखा और देख कर अत्यन्त दुःखी हुए और उस महिला की दयनीय दशा देख कर महर्षि दयानन्द रोने लगे। तभी तो कहा गया है कि यदि आप के प्रियजन का प्रवेश, देश अनुकूल न हो तो भी आप सुखी नहीं है। अतः महर्षि दयानंद लिखते हैं–

प्रत्येक को अपनी उन्नति से ही संतुष्ट नहीं रहना चाहिए किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये। –आर्य समाज के नियम 9

इसकी प्राप्ति केवल कामना एवं अहंकाररहित भक्ति से हो सकती है। वास्तव में, आनंदस्वरूप परमात्मा है। आनन्द प्राप्ति पर संसार के सुख साधनों की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। इसके विपरीत यदि सारा संसार नष्ट भी हो जाए तो दुःख नहीं होता अर्थात् सुख-दुःख से आनन्द प्राप्त आत्मा ऊपर उठ जाती है। भगवत्प्राप्ति के सूत्र हैं–सत्संग, श्रद्धा, भावना एवं भक्ति–जब आप का सारे संसार के प्राणियों में प्रभु की अनुभूति होने लगे तो

समझिये कि आपके जीवन में भगवत्प्राप्ति का प्रारम्भ हो गया है। जैसे तुलसीदास ''रामचरितमानस'' में लिखते हैं–

आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जल थल नभ बासी।
सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुगपानी।।

बालकांड 7(घ).1

इस संसार की समस्त योनियों में चार प्रकार के जीव–जरायुज, अण्डज, उद्भिज एवं स्वेदज रहते हैं। उन सबसे भरा हुआ संसार सीता राममय (प्रभु का वास) है। मैं इनको करबद्ध प्रणाम करता हूँ।

वास्तव में आनन्दप्राप्ति अंतःकरण की शुद्धि से होती है। ऐसा तभी होता है यदि हम समझते हैं और मानते हैं कि परमात्मा हमारे हृदय में सदा विराजमान रहता है। वह हमारे सब विचारों और कार्यों को देख रहा है तो हम अपराध और पाप से बचे रह सकते हैं। वस्तुतः सुख-दुःख, लाभ-हानि, उत्थान-पतन, संयोग-वियोग, जन्म-मरण, फूल-कांटे जुड़वां भाई हैं और साथ-साथ रहते हैं। मानव जीवन में ऐसा व्यक्ति खोजना कठिन है, जिसके जीवन में सुख ही सुख हो। दुःख नाममात्र भी न हो। इसके विपरीत ऐसा व्यक्ति भी खोजना कठिन है जिसके जीवन में दुःख ही दुःख हो सुख नाममात्र भी न हो। जीवन में दुःख से सुख अधिक हैं।

सुख क्या है? दुःख का कम से कम मात्रा में अनुभव होना ही सुख है और सुख का कम से कम मात्रा में अनुभव होना ही दुःख है। किसी भी मात्रा और अनुपात में व्यक्ति को प्रतिदिन सुख-दुःख का अनुभव होता ही रहता है। जब इन दोनों का अभाव हो जाये तब आनन्द की उपलब्धि होती है। अतः सुख व दुःख को समान रूप से समझना तप है, तप करने वाला तपस्वी होता है और वस्तुतः उसे ही आनंदानुभूति होती है।

यदि हम सुख चाहते हैं तो यह निश्चित् है कि हमने दुःख भी चाह लिया है, क्योंकि सुख-दुःख एक सिक्के के ही दो पहलू हैं। हम दोनों में से एक को

नहीं चुन सकते, यही विधि का विधान है। हम इस विधान को न तो तोड़ सकते हैं और न बदल ही सकते हैं। परन्तु मन को वश में करके, विवेक का उपयोग करके और वास्तविकता को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करके यदि हम सुख व दुःख दोनों का त्याग कर सकें अर्थात् इस सिक्के को ही त्याग दें तो हम आनन्द का अनुभव कर सकते हैं अन्यथा नहीं। सुख का अनुभव आसक्ति की पूर्ति से होता है और इसके विपरीत दुःख का अनुभव आसक्ति की न पूर्ति होने से होता है, क्योंकि अज्ञान, अपेक्षा, अभाव, भय ही दुःख के कारण हैं।

दरअसल हमने आनंद का अनुभव कभी किया ही नहीं। केवल इसका नाम सुना है और हम सुख को ही आनन्द समझ रहे हैं। परन्तु जब हमें सुख का अनुभव होता है तो हम कहते हैं कि बहुत आनन्द आया जब कि सही बात यह है कि आनन्द की प्राप्ति के लिए हमें मोह-ममता, आसक्ति का परित्याग करना पड़ेगा। तभी हम स्थितप्रज्ञ बनकर आनन्दानुभूति उपलब्ध कर सकते हैं। ऐसी अवस्था में जाकर व्यक्ति प्रभु का अनन्य भक्त बन जाता है और उसके चरण एवं शरण में जाकर तुलसीदास जी के शब्दों में पुकार उठता है–

सुख दुःख दोनों एक सम संतन के मन माहिं।
मेरु उदधि गत मुकुर जिमि भार भीजबो नाहिं।।

संतों के लिये सुख और दुःख समान होते हैं। वस्तुतः वे इन दोनों अवस्थाओं में सम रहते हैं जैसे सागर के जल का पर्वतों और शीशों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। उसी प्रकार सुख व दुःख का भी संतों पर कोई प्रभाव नहीं होता क्योंकि वे आसक्तिरहित होकर संसार में जीते हैं। जैसे किसी कवि ने कहा है–

सदा दीवाली संत की, बारह मास बसंत

संतों के लिए रोज दीवाली है उनके लिए बारह महीने बसंत ऋतु है, क्योंकि जो भगवान् के उस दिव्य प्रकाश में सदा आनन्द विभोर रहते हैं उनके लिये अलग-अलग दीपक जलाने वाले दिन को दीवाली नहीं कहते। वहाँ तो

सदा दीवाली है । अतः प्रभु भक्त सदा ही प्रसन्न रहता है । उदास क्यों हो? दीन क्यों हो? मलिन क्यों हो? क्योंकि भक्ति के नाम पर दीनता, हीनता और मलीनता को जीवन में प्रतिष्ठित करना व्यक्ति के लिये अभिशाप है न कि वरदान, क्योंकि संसार के सभी भोग शहद में लिपटे हए विष के समान होते हैं । ये केवल देखने मात्र से सुन्दर लगते हैं परन्तु इनमें केवल मानने मात्र का सुख है । यह केवल मृततृष्णा है इसमें कहीं भी आनन्द का लेश मात्र भी नहीं है । फिर इनसे प्रेम करना मूर्खता नहीं तो क्या है? सच्चा सुख, शांति और आनंद परमात्मा में है । एक उर्दू शायर ने लिखा है–

राज़ी है (संतुष्ट) हम उसी में जिसमें तेरी रज़ा (आशा) है ।
हमारी न आरजू (इच्छा) है न जुस्तजू (तलाश) है ।।

सुख शब्द सु+ख से बनता है सु का अर्थ है अच्छा और ख का अर्थ है इन्द्रियाँ । इसी प्रकार दुःख शब्द दु+ख से बनता है । दु का अर्थ है बुरा ख का अर्थ है इन्द्रियां अर्थात् सुख का अर्थ हुआ जो इन्द्रियों को अच्छा लगे और दुःख का अर्थ हुआ जो इन्द्रियों को बुरा लगे । इसी कारण सुख कहने से बढ़ता है और दुःख कहने से घटता है । वस्तुतः सुख-दुःख के बारे में प्रत्येक व्यक्ति की अपनी पृथक् मान्यता होती है । दुःखों का एक मुख्य कारण होता है अतीत की स्मृति । कुछ दुःख भविष्य की व्यर्थ कल्पनाओं से भी उत्पन्न होते हैं । व्यक्ति वर्तमान में रहता तो है, परन्तु जीता नहीं ।

कुछ सुख अमीर लोगों के हैं और कुछ सुख ग़रीब लोगों के हैं, परन्तु हम ग़रीबों को ही दुःखी समझते हैं । सुख जब अधिक होते हैं तो हम उसको सुखी कहते हैं । वस्तुतः उस समय सुख व दुःख दोनों मिश्रित होते हैं । प्रायः यह समझा जाता है कि सुखी व्यक्ति ही धार्मिक हो सकता है और दुःखी व्यक्ति की प्रार्थनाएँ माँगे एवं शिकायतें ही होती हैं । परन्तु हमें ऐसा नहीं सोचना चाहिए क्योंकि यदि किसी वस्तु को परिश्रम करने पर भी हम प्राप्त नहीं कर सके तो उसके बदले में हमें कोई और सुख मिल गया जिसको हम महत्ता नहीं देते । क्योंकि प्रकृति में सदा ही संतुलननियम (Law of

Compensation) काम करता है । इसका भाव है कि मानव जीवन में सदा ही घटा एवं जमा, लाभ एवं हानि होते रहते हैं जिन्हें हम नहीं समझते हैं । इस कारण ही संसार की किसी भी वस्तु एवं घटना का पूरा लाभ अथवा पूरी हानि कभी भी नहीं होती । इसका मूलाधार है प्रकृति का संतुलन नियम है । हिन्दी साहित्य के महाकवि जयशंकर प्रसाद ने अपने विश्वविख्यात महाकाव्य ''कामायनी'' में लिखा है–

शापित न यहाँ है कोई, तापित पापी न यहाँ है ।
जीवन वसुधा समतल है, समरस है जो कि जहाँ है ।। –आनन्दसर्ग

मनु इडा से कहते हैं कि इस तपोवन में कोई भी न तो किसी प्रकार से शाप से ग्रस्त है और न संतापों से ही दुःखी है । यहाँ कोई भी प्राणी किसी प्रकार का भी पाप नहीं करता है । वस्तुतः यहाँ के प्राणियों का जीवन समतल भूमि के समान है और यहाँ ऊँच नीच का भेदभाव नहीं है । जो भी प्राणी जहाँ पर है समान रूप से आनन्द भोग रहा है ।

व्यक्ति को अपनी रुचि एवं योग्यता के अनुसार ही अपने व्यवसाय का चुनाव करना चाहिए । ऐसा करने से उसके जीवन में स्वयं ही सुख उत्पन्न हो जायेगा क्योंकि शौक के काम में व्यक्ति तल्लीन हो जाता है । तल्लीनता से अत्यधिक प्रसन्नता होती है और इससे लगभग 50 प्रतिशत रोग दूर हो जाते हैं । हम देखते हैं कि संसार में हमसे ऊँचे पदों एवं स्थानों पर अनेक व्यक्ति हैं । प्रत्येक व्यक्ति यदि चाहे कि वह उच्चाधिकारी व बड़ा धनी बने तो यह कहाँ सम्भव है । अपने से निर्धनों को देखिये जिन्हें भरपेट भोजन भी नहीं मिलता । तब आपको प्रतीत होगा कि आप कितने भाग्यशाली हैं कि दो समय इज़्ज़त से भरपेट भोजन कर लेते हैं । कितने ही आप जैसे व्यक्ति सड़कों पर पड़े ठिठुरते हुये रात्रि व्यतीत करते हैं । नंगे, उघाड़े, क्लांत पड़े रहते हैं । आप इसके विपरीत अपने घर में मज़े से रात्रि व्यतीत करते हैं । जरा सोचिए कि आप कितने भाग्यवान् हैं ।

जरा अस्पतालों में जाकर देखिये । कितने रोगों के रोगियों का ताँता

बंधा है । कोई हाय-हाय कर रहा है । कोई कराह रहा है, कोई खाँ-खाँ करके खंस रहा है । कोई मूत्ररोग और कोई नेत्ररोग से पीड़ित है । किसी रोगी का ऑपरेशन किया जा रहा है । परन्तु आपका स्वस्थ शरीर है । हाथ पाँव चलते हैं, भोजन ठीक समय पर पच जाता है । इसी कारण आप का चेहरा मधुर मुस्कान से हरा भरा है । सचमुच आप कितने भाग्यशाली हैं । परमात्मा ने जो कुछ आप को दे रखा है वह आपकी आवश्यकताओं से अधिक है, जो नहीं दिया उसके बिना भी आपका कार्य अच्छी पकार से निर्विघ्न चल सकता है । जब हम अपने से अधिक दुःखी दुनियाँ के लोगों को देखते हैं तो सचमुच हमें प्रतीत होता है कि वस्तुतः हम बड़े ही भाग्यशाली हैं ।

अतः यह कहना उचित ही है कि हमारे सारे दुःखों एवं दुरितों का एक मात्र मूलकारण आसक्ति ही है ।

(1)	काम क्या है ?	भोगों में आसक्ति ।
(2)	क्रोध क्या है ?	स्वभाव में आसक्ति ।
(3)	लोभ क्या है ?	धन में आसक्ति ।
(4)	मोह क्या है ?	स्वजनों में आसक्ति ।
(5)	अहंकार क्या है ?	अहं में आसक्ति ।
(6)	श्रद्धा क्या है ?	गुरु में आसक्ति ।
(7)	भ्रष्टाचार क्या है ?	स्वार्थ में आसक्ति ।
(8)	वासना क्या है ?	मानसिक विषयों में आसक्ति ।

कहने का तात्पर्य है कि संसार की प्रत्येक बुराई एवं बंधन स्वयंमेव टूट जाते हैं जब मानव योगयुक्त, जीवनमुक्त, शुद्ध बुद्ध हो जाता है । यहाँ तक कि इच्छा का उद्‌गम भी आसक्ति से ही होता है । हम कह सकते हैं आसक्ति+कामना+प्राथमिकता=इच्छा । आसक्ति का परित्याग करके भक्ति की ओर और वासना का परित्याग करके उपासना की ओर अग्रसर होना चाहिए ताकि हम सुखमय, शांतमय एवं आनन्दमय जीवन व्यतीत कर सकें ।

प्रत्येक आशा की पूर्ति पर हम सुखी और उसके पूरा न होने पर हम दुःखी होते हैं। जैसे किसी को प्यास लगी है तो वह स्वयं को बहुत दुःखी अनुभव करता है और यहाँ तक कहता है हाय ! मैं मर गया। परन्तु जल मिल जाने पर बहुत सुख अनुभव करता है। महर्षि वेदव्यास ''महाभारत'' में लिखते हैं–

संतापाद् भ्रम्यते रूपं, संतापाद् भ्रष्यते बलं।
संतापाद् भ्रष्यते ज्ञानं, संतापाद् व्याधि-मृच्छति।।

चिन्ता से रूप, बल और ज्ञान नष्ट हो जाते हैं और मानव रोगी हो जाता है। एक बार एक शिष्य ने अपने गुरु से प्रश्न किया–

प्र. सुख किसे प्राप्त होता है?

उ. जिसका हृदय शांत है।

प्र. हृदय किसका शांत है?

उ. जिसका मन चंचल नहीं।

प्र. मन किसका चंचल नहीं?

उ. जिसे किसी वस्तु की अभिलाषा नहीं।

प्र. अभिलाषा किसे नहीं है?

उ. जिसको किसी वस्तु में आसक्ति नहीं।

प्र. आसक्ति किसे नहीं?

उ. जिसकी बुद्धि में मोह नहीं।

निम्नलिखित चार वस्तुओं की कभी पूर्ति नहीं होती–

(1) मौत का मुँह कभी भी नहीं भरता है क्योंकि जो व्यक्ति पैदा होता है उसकी मृत्यु अनिवार्य है। इसमें कोई भी व्यक्ति अपवाद नहीं है। इसलिये एक शायर ने कहा है–

जिन्दगी एक किराए का घर है, इक न इक दिन बदलना होगा ।
मौत जब तुमको आवाज़ देगी, घर से बाहर निकलना पड़ेगा ।।
खाक मिट्टी का हर इंसान है बाद मरने पर होना यही है ।
या जमीं पर तो लतपत बनेगी या चिता पर जलना होगा ।।

(2) सागर भी कभी नहीं भरता है क्योंकि इसकी गहराई और स्थान असीमित होते हैं । दूसरे इसका पानी पृथ्वी में समाता रहता है ।

(3) मानव का पेट कभी भी सदा के लिये नहीं भरता है । थोड़ी देर के लिये भर जाता है और फिर खाली हो जाता है क्योंकि कुछ समय के पश्चात् भोजन, दूध, फल, चाय, पानी आदि की आवश्यकता पड़ती है । इन वस्तुओं के अभाव से शरीर चल नहीं सकता ।

(4) हमारी इच्छाएँ भी कभी पूरी नहीं होती क्योंकि एक इच्छा पूरी होती है तो अनेक इच्छाएँ और पैदा हो जाती हैं । इसके विपरीत यदि हम एक इच्छा पर नियंत्रण करते हैं तो अनेक इच्छाएं भाग जाती हैं । नत्था सिंह जी ''निर्दोष'' ने इच्छाओं के विषय में पंजाबी भाषा में सुन्दर गीत लिखा है? ज़रा देखिये–

आसां कदे बंदे दियां हुंदिया ना पूरियां,
कलपदा बथेरा फिर वी रैंहदियां अधूरियां ।
आखदे सयाने माया माया नूं है जोड़दी,
लक्खां वालयां नू रहन्दी कल्पना करोड़ दी ।
होवें जे करोड़ ताँबी पैंदियाँ ना पूरियाँ,
कलपदा बथेरा फिर वी रैंहदियां अधूरियाँ ।
ताँगे वाला कैहन्दा रब्बा मेरे हेठ कार होवे,
कार वाला सोचे मेरी हवा च उड़ार होवे ।
तकदा जहाज नूं ते बटदा ए धूरियां,
कलपदा बथेरा फिर वी रैंहदियां अधूरियां ।

कैहन्दा रब्बा मेरे कारखाने क्यों नहीं चलदे,
छपरी च बैठा लवे सपने महल दे ।
छड़ बैठा दिल दियां सबर सवूरियाँ,
कलपदा बथेरा फिर वी रैंहदियां अधूरियां ।
देख के अमीर नूं ग़रीब पया सोचदा,
बन जावां बादशाह अमीर एहो सोचदा ।
हुकमां दे नशे दियां रहन मगरूरियां,
कलपदा बथेरा फिर वी रैंहदियां अधूरियां ।
ऐनी खुल दित्ती रहने हर इक ख़ाहिश नूं,
वस लगे बंदे दा चढ़ जाए आकाश नूं ।
खम्ब नहीं मिले कैहन्दा हाये मजबूरियाँ,
कलपदा बथेरा फिर वी रैंहदियां अधूरियां ।
'नत्थासिंह' सब्र संतोष नाल जी लै तूं,
रूखी मिसी खाके ते ठंडा पानी पी लै तूं ।
तकदा गुवांढी दे क्यों हलवा ते पूरियां,
कलपदा बथेरा फिर वी रैंहदियां अधूरियां ।

बृहदारण्यक उपनिषद् में कितना सुन्दर लिखा है–

जब हृदय में रहने वाली कामनायें नष्ट हो जाती हैं तब यह मरणधर्मा मनुष्य ही अमृत हो जाता है और उसे इसी शरीर में ब्रह्म की प्राप्ति हो जाती है ।

अतः इच्छाओं की कोई सीमा नहीं ये रबड़ की तरह बढ़ाने से बढ़ती है और घटाने से घटती हैं । संसार के भोग तो हमारे से भोगे नहीं जाते अपितु हमीं उनके शिकार हो जाते हैं । तप तपते, तप तो पूरा नहीं होता हमीं बीत जाते हैं । दुनियाँ के पदार्थों की इच्छा पूरी करते-करते वह तो पूरी नहीं होती हम ही पूरे हो जाते हैं । इसलिये आदिशंकराचार्य ''भजगोविंदम्'' में लिखते हैं–

अंगगलितं पलितं मुण्डं, दशन विहीनं जातं तुण्डं ।
वृद्धोयाति गृहीत्वादण्डं, तदपि न मुंचत्याशापिंड ।। श्लोक 15

संसार के भोग भोगते मानव के अंग गल जाते हैं । बाल सफेद पड़ जाते हैं और चाँद सा मुखड़ा पापड़ का टुकड़ा बन जाता है । बुढ़ापे में कमजोरी के कारण लाठी टेक-टेक कर चलना पड़ता है । परन्तु इच्छाएँ सदा युवा रहती हैं, क्योंकि मानव की इच्छाएँ असीमित हैं । अतः एक उर्दू शायर के शब्दों में–

दफ़नाना देखभाल के हसरत भरे की लाश ।
लिपटी हुई कफ़न में कहीं कोई आरजू न हो ।।

अतः सभी इच्छाओं की कभी भी पूर्ति नहीं हो सकती और न ही भौतिक शरीर के रहते हुए ऐसा हो सकता है क्योंकि पूरी तरह इच्छाओं से रहित केवल जड़ पदार्थ ही हो सकता है न कि चेतन मानव ।

वस्तुतः इच्छा की उत्पत्ति अभाव की अनुभूति के कारण होती है । अभाव की अनुभूति कब होती है, जब अपने पड़ोस में किसी प्रभावशाली व्यक्ति को आप देखते हैं । किसी के प्रभाव में ही अपने अभाव की अनुभूति होती है और इस अनुभूति का अंत तभी हो सकता है जबकि आप प्रभाव और अभाव से मुक्त होकर स्वभाव में प्रतिष्ठित हो जायेंगे और स्वभाव में प्रतिष्ठित होना ही सारे दुःखों के उन्मूलन का एकमात्र उपाय है ।

इस कारण हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि न तो सारी इच्छाओं की पूर्ति हो सकती है और न ही शरीर के रहते हुए इच्छारहित स्थिति हो सकती है । इसलिये सरल और सीधा मध्यमार्ग यही है कि व्यक्ति अपनी इच्छाओं को नियमित, व्यवस्थित और मर्यादित करे । अपने सारे दिन के कार्यों पर विचार करें । अपनी दिनचर्या तथा जीवनचर्या को व्यवस्थित करे । व्यर्थ स्वयं को अपने इच्छाओं का दास न बनाये । जब इच्छाएँ अपने वश में होगी तो व्यक्ति इनके पूरा न होने पर विचलित नहीं होगा । जैसे मर्यादा में रहता हुआ ही नदी का जल हमारे अनेक कार्यों को सिद्ध करता है परन्तु जब वह मर्यादा से बाहर

हो जाता है तो बाढ़ का रूप धारण कर लाखों की जान और करोड़ों अरबों की सम्पत्ति का विनाश कर प्रलय का दृश्य उपस्थित कर देता है । इसके विषय में लार्ड रसल ने कहा है–

जो अपनी इच्छाओं को नियंत्रित नहीं कर सकता वह कभी स्वतंत्र नहीं हो सकता और स्वतन्त्रता ही सबसे बड़ा सुख है ।

जिस प्रकार घर की सुन्दतरा चीजों की अधिकता या कमी से सम्बन्ध नहीं रखती अपितु घर की सुन्दरता घर में उपस्थित चीजों की व्यवस्था पर ही निर्भर होती है वैसे जीवन में सुख, शांति, आनन्द आदि दिनचर्या व जीवनचर्या की व्यवस्था पर निर्भर करती है ।

6. शारीरिक विकास

मानव शरीर संसार का सर्वोत्तम आश्चर्य और प्रकृति की अद्‌भुत कारीगरी है, जिसे देखकर हम आश्चर्यचकित रह जाते हैं। इसमें अनेक सर्वश्रेष्ठ, स्वचालित, कोमल एवं सूक्ष्म परन्तु शक्तिशाली यंत्र हैं। जैसे आँखें अद्‌भुत कैमरा, कान अद्वितीय श्रवणपद्धति, हृदय और फेफड़े निरंतर चलने वाले अनुपम पंपिगयंत्र, 206 हड्‌डियां 680 मांसपेशियां एवं 340 संधियों का अद्‌भुत अस्थिपिंजर, पेट आश्चर्यजनक रासायनिक प्रयोगशाला, नाड़ी मीलों लम्बी संचार व्यवस्था, मन अनंत क्षमतायुक्त अद्‌भुत कॉम्प्यूटर। इसके अतिरिक्त इसमें हृदय एक दिन में 1,03,689 बार धड़कता है, रक्त एक दिन में, 16,88,000 मील की यात्रा करता है। एक दिन में हम 21,000 बार सांस लेते हैं। इसी का नाम जीवन है। मानव शरीर की अद्‌भुत रचना को देखकर एक हिन्दी कवि ने लिखा है–

आदमी का जिस्म क्या है, जिसपे शैदा (मोहित) है जहाँ।
एक मिट्‌टी की इमारत, एक मिट्‌टी का मकाँ।।
खून तो गारा है इसमें, ईंटे इसमें हड्‌डियाँ।
चंद सांसों पर खड़ा है यह ख़्याली आसमाँ।।
मौत की पुरजोर आँधी इसे जब टकराएगी।
दख लेना यह इमारत खुद-ब-खुद गिर जाएगी।।

सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन सभी यंत्रों के मध्य का पारस्परिक मेल जिससे यह मानव शरीर रूपी यंत्र 100 वर्षों से भी अधिक लम्बे समय तक काम कर सकता है।

वस्तुतः स्वास्थ्य शब्द की व्युत्पत्ति स्व+स्थ शब्दों से हुई है। 'स्व' का अर्थ है आत्मा और 'स्थ' का अर्थ है स्थिति अर्थात् शरीर की आत्मा में सुन्दर, सुष्ठु एवं स्वस्थ स्थिति का नाम ही स्वास्थ्य है। अतः स्वस्थ व्यक्ति वह है जो मन, वचन एवं कर्म से शुद्ध हो, जो प्रत्येक अवस्था में प्रसन्न है, जो काम को कर्त्तव्य समझकर करता है जिसकी पाचनशक्ति ठीक है, भूख प्राकृतिक है,

नींद पूरी आती है, चेहरे एवं आँखों में चमक है एवं जिसका जीवन नियमबद्ध है। अतः प्रस्तुत परिप्रेक्ष्य में विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने स्वास्थ्य की अधोलिखित परिभाषा सत्य है–

Health is not mere absence of diseases. It is the state of being physically, mentally and socially well-being.

स्वास्थ्य का भाव केवल रोगों से मुक्ति नहीं है। अपितु इसका अर्थ है कि मानव शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक रूप से ठीक हो।

अतः यह कहना उचित ही है कि संसार का सर्वोत्तम सुख अच्छा स्वास्थ्य है। इसके बिना न तो मानव कोई भौतिक सुख पा सकता है न आध्यात्मिक।

मानव अपने जीवन को सुखी बनाने के लिये अनेक वस्तुओं का संग्रह करता है। यह संग्रह उसे तभी सुख दे सकता है यदि वह निरोगी हो। रोगी और कुछ तो क्या करेगा, वह तो स्वयं को भी नहीं संभाल सकता। इसलिये महर्षि चरक ने 'आयुर्वेद' में सत्य ही कहा है–

सर्वमन्यत परित्यज्य शरीर मनु पालयेत।
तद्भावेहिं भावनां सर्वभावः शरीरिणाम्।।

–चरक संहिता निदान 617

संसार के सब कार्यों को छोड़कर सर्वप्रथम शरीर की देखभाल करनी चाहिए क्योंकि इसके ठीक न रहने पर सब कुछ होता हुआ भी सर्वथा बेकार हो जाता है। अतः उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेम चंद लिखते हैं–

स्वास्थ्य सब से बड़ा उपहार है, संतोष सबसे बड़ा धन है, और वफ़ादारी सबसे बड़ा संबंध है।

विद्वानों के अनुसार हमारे स्वास्थ्य को अधोलिखित चार भागों में विभक्त किया जा सकता है–

1. शारीरिक स्वास्थ्य – इसका अर्थ है कि व्यक्ति के शरीर में किसी भी प्रकार का रोग न हो। सभी अंग पूर्णता कार्य करते हों।

2. मानसिक स्वास्थ्य – इसका अर्थ है कि व्यक्ति का मन शुद्ध एवं शांत हो। कोई परेशानी न हो।

3. मैडिकल स्वास्थ्य – (शारीरिक संगठन और संरचना) इसका अर्थ है कि शरीर के सब अंग ठीक हो ।

4. सांस्कृतिक स्वास्थ्य – इसका अर्थ है कि हमारे मन के विचार शुद्ध हो । सबके उपकार की भावना से ओतप्रोत हो ।

उपनिषदों में कहा गया है–

क्रतुमनः पुरुषः

यह मानव संकल्पों का बना हुआ है जैसी हमारी श्रद्धा होती है वैसे ही हमारे विचार बन जाते हैं । विचारों में अपार शक्ति है जैसे हमारे विचार होंगे हम वैसे बन जायेंगे विचारों का प्रभाव मन पर पड़ेगा । यदि हमारे विचारों में प्रेम, त्याग, विनय, क्षमा और दूसरों के गुणों को देखने की दृष्टि है तो मन में शांति होगी, शरीर की पाचनशक्ति बढ़ेगी, रक्त का संचरण नियमित होगा और गहरी नींद आयेगी । इसके विपरीत यदि हमारे विचारों में घृणा, भोग शक्ति, अभिमान और परदोषदर्शन है तो मन निश्चय ही अशांत रहेगा । अशांति से दुःख होगा । शरीर में बीमारियाँ पैदा होगी । अतः संस्कृत साहित्य में एक कहावत है–

यत्चिन्तयति तत्करोति यत्करोति, तत् भवति ।

जैसा हमारा चिन्तन होगा वैसा ही हमारा कर्म होगा जैसा कर्म होगा वैसा ही उसका फल होगा ।

इसलिये स्वामी शिवानन्द अपनी पुस्तक **Mind its mysteries and control** में लिखते हैं–

> **Pleasure and pain are the effects of virtue and vice. They are two kinds of emotions that pertain to the mind alone. It is the mind alone which brings pleasures and pains on itself and enjoys them through its excessive inclination towards objects. Mind contracts during pain and expands during pleasure. P-210**

सुख-दुःख नेकी व बदी का प्रभाव है, ये दो प्रकार की भावनायें हैं जिसका संबंध केवल मन से ही है । मन से ही सुख-दुःख उत्पन्न होता है । यह

सब मन के कारण होता है । दुःख में मन संकीर्ण और सुख में उदार हो जाता है ।

शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के सुन्दर समन्वय का नाम पुरुष है ।

1. शरीर को धन की आवश्यकता है ।
2. मन को काम की आवश्यकता है ।
3 बुद्धि को धर्म की आवश्यकता है ।
4. आत्मा को आनंद या मोक्ष का आवश्यकता है ।

इसलिये मानव-जीवन का लक्ष्य पुरुषार्थ चतुष्ट्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्ति है । इसके अतिरिक्त जितने भी प्राणी हैं उनका लक्ष्य है अर्थ और काम । अतः मानवयोनि को सर्वोत्कृष्ट योनि कहा गया हैं इसका लाभ तभी है यदि हम जीवन में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त करें ।

अच्छे स्वास्थ्य होने पर ही सांसारिक सुख सुविधाओं और आत्मिक साधना की सिद्धि हो सकती है । कालिदास जी ने अपने नाटक ''रघुवंश'' में लिखा है–

शरीरमाध्यम् खलु धर्म साधनम्

शरीर धर्माचरण का साधन है ।

वे मुख्य बिन्दु जिन को ध्यान में रखकर प्रत्येक व्यक्ति स्वस्थ जीवन व्यतीत कर सकता है, वे निम्नलिखित हैं :–

1. प्रातः जागरण – प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में 4 बजे उठो । इसके उपरांत दाँत मुँह साफ करके रात्रि को तांबे के बर्तन में रखा हुआ पानी पीओ । यदि कब्ज़ की शिकायत हो तो इसमें त्रिफला डाल लो । अतः फ्रैंकलिन ने सत्य ही लिखा है–

Early to bed, early to rise, makes a man Healthy, Wealthy and Wise.

जो व्यक्ति रात्रि को जल्दी सो जाता है और प्रातःकाल जल्दी उठ जाता है वह व्यक्ति स्वस्थ, धनी एवं बुद्धिमान बन जाता है ।

व्यायाम – प्रतिदिन हम जो भोजन करते हैं वह भोज्य पदार्थ जब पूर्ण रूप में पच जाता है तब उससे परिपक्व होकर सात धातुओं का विकास होता है। जिसकी पाचनशक्ति जितनी सुदृढ़ होती है वह खाद्य पदार्थ से उतने ही अधिक पोषक तत्त्व उसी प्रकार ग्रहण करता है, जैसे अच्छा यंत्र गन्ने से पूर्ण रस निकाल पाता है। इसलिये व्यायाम द्वारा शरीर को शक्तिशाली बनाना चाहिये। पौधे में जैसे खाद और पानी देने के पश्चात् यथा समय गुड़ाई कर देने से खाद मिट्टी में मिलकर अधिक शक्ति देता है। उस प्रकार व्यायाम से मुक्त पदार्थ शरीर का अंग बनकर इसका विकास करता है। जैसे मक्खन निकालने के लिये दही मंथन अत्यावश्यक है, वैसे ही व्यायाम रूपी मंथन द्वारा खाये हुए भोजन से उचित मात्रा में पोषक तत्त्व प्राप्त होते हैं।

प्रतिदिन नियमित रूप से व्यायाम करने से शरीर में स्फूर्ति, सौन्दर्य आता है ऐसा व्यक्ति न रोगी होता है और न ही शीघ्र बूढ़ा होता है। मानसिक काम करने वालों के लिए तो व्यायाम आवश्यक है। शारीरिक स्वास्थ्य के लिये आसन प्राणायाम भी परमावश्यक हैं। इससे शरीर के सभी अंगों का विकार दूर होकर शरीर निरोग हो जाता है। यह इससे भीतरी विकार के क्षीण होने पर रक्त शुद्धि में नियमितता आती है और रक्त शुद्धि ही सौन्दर्य का मूल कारण हैं शारीरिक काम करने वाले व्यक्तियों को इसकी आवश्यकता अति लाभदायक है।

वे सभी व्यायाम स्वास्थ्य के लिये अच्छे और लाभदायक हैं जिनसे मांसपेशियों पर खिंचाव पड़ता है। इसी कारण से योगासनों को ही सर्वोत्तम व्यायाम माना जा सकता है। इसके अतिरिक्त व्यायाम शरीर में रक्त का प्रवाह बढ़ाता है। शरीर के लचीलेपन में वृद्धि होती है। मन में स्फूर्ति एवं उत्साह बना रहता है।

व्यायामों में तैरना भी सर्वश्रेष्ठ व्यायाम है परन्तु इसको प्रत्येक व्यक्ति नहीं कर सकता। प्रातः भ्रमण सब आयु के व्यक्तियों के लिये श्रेष्ठ व्यायाम है। क्योंकि इसको प्रत्येक व्यक्ति आसानी से कर सकता है। कितनी दूर घूमें, यह बात व्यक्ति की अपनी सुविधा और समय पर निर्भर करती है। व्यायाम शारीरिक शक्ति, प्रकृति और आयु के अनुसार ही करना चाहिए। इतना

अधिक व्यायाम न किया जाये कि शरीर को अत्यधिक थकावट हो जाये। शारीरिक विकास के लिये सप्ताह में कम से कम एक बार तेल की मालिश अवश्य करनी चाहिये। व्यायाम के मुख्य लाभों का उल्लेख इस प्रकार किया जाता है।

1. इससे शारीरिक शक्ति का विकास होता है और अवयवों एवं ग्रंथियों के कार्य सुचारू रूप से होते हैं।

2. व्यायाम करने से रक्त संचार में तेजी आती है। यह रक्त को सारे शरीर में ले जाता है क्योंकि मंदरक्त संचार के कारण दर्द होता है।

3. इससे सारी मांसपेशियाँ नियंत्रित, संतुलित स्थिति में रहती है।

4. रोगों के विरुद्ध यह सबसे बढ़िया बीमा है क्योंकि स्वस्थ रक्त के द्वारा प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती हैं इससे शरीर पर आक्रमण करने वाले कीटाणु मर जाते हैं।

5. इसके कारण बढ़िया रक्तसंचार और बढ़िया निष्कासन होता हैं जिसके द्वारा अनेक भयानक रोगों और चोटों से व्यक्ति बच जाता है।

3. सात्विक भोजन – क्यों हमें सात्विक भोजन ही लेना चाहिये क्योंकि यह राजसी और तामसी भोजन की अपेक्षा शीघ्र पच जाता है। हम अपने व्यवहार की सिद्धियों के लिए प्रतिक्षण शरीर का उपयोग करते हैं। इससे उसकी शक्ति का ह्रास होता है। उसकी पूर्ति, विकास, सुरक्षा के लिये भोजन की आवश्यकता पड़ती है। इसलिये चरक ने कहा है–**प्राणियों का प्राण आहार है।** स्वाभाविक एवं आगंतुक रोगों के अतिरिक्त जितने भी मानसिक एवं शारीरिक रोग होते हैं, वे मुख्यतः व्यक्ति के ग़लत खान-पान और ग़लत रहन-सहन से होते हैं। डॉक्टरों का अनुमान है कि वे रोग 80 प्रतिशत से अधिक हैं क्योंकि साधारण व्यक्ति अपनी आवश्यकता से कहीं अधिक खाता है। अमेरिकी डॉक्टर केनेथवर ने ठीक ही लिखा है–

यदि मानव जाति अपने भोजन का एक तिहाई घटाकर खाये तो डॉक्टर लोग भूखे रहेंगे। क्योंकि लोग ज़्यादा खाकर बीमार होते हैं और इससे डॉक्टरों की रोज़ी-रोटी चलती है।

खानपान में शुद्धता भी आवश्यक है। एक कवि ने ''मिलावट है' नामक कविता में उचित ही लिखा है–

ज़माना है मिलावट का कि चीजों में मिलावट है,
रहा कुछ भी नहीं खालिस कि बीजों में मिलावट है।
जब इस दुनियाँ में आते हैं, तो खालिस कुछ नहीं पाते,
बने हैं इसलिये झूठे कि घुट्टी में मिलावट है।
न माँ का दूध ही पाया, न माँ का प्रेम ही देखा,
पले गोदी में आया की, ये ममता में मिलावट है।
न असली घी नजर आया, न खालिस दूध ही चक्खा,
अनाजों में मिलावट है, मसालों में मिलावट है।
कहाँ बीमारियों ने आओ मिल करके करे हमला
कि अब कोई नहीं खतरा, दवाओं में मिलावट है।
ये धुँधली आँखें हिलते दाँत यूँ फरियाद करते हैं,
कि अंजन में मिलावट और मंजन में मिलावट है।

वस्तुतः प्राकृतिक भोजन स्वयं तो निर्दोष होता ही है, साथ ही जो व्यक्ति उसका सेवन करता है उसके शरीर की कायाकल्प करके उसे भी निर्दोष बना देता है। एक कहावत मशहूर है–

जिह्वा के प्रधान गुणरस को जिसने जीत लिया। उसने सभी को जीत लिया।

आचार्य चाणक्य ''चाणक्य नीति'' में लिखते हैं–

लोभ-मूलानि पापानि, रस मूलाश्च व्याधयः।
स्नेह-मूलानि दुःखानि, त्रीणि त्यक्त्वा सुखी भवेत्।।

पापों का मूल लोभ है क्योंकि लोभ को पाप का बाप कहा जाता है, रोगों का मूल स्वाद है, दुःखों का मूल आसक्ति है। इनका परित्याग करके मानव सुखी रह सकता है।

अतः शारीरिक विकास की दृष्टि से घी, दूध, फल, अन्न आदि अपनी पाचनशक्ति के अनुसार लेने चाहिये क्योंकि समुचित भोजन स्वास्थ्य का एक

आवश्यक अंग है। भोजन सदा अपने शरीर के ताप के अनुरूप ही लेना चाहिए और भूख से कम मात्रा में लेना चाहिये, क्योंकि अधिक भोजन स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। खट्टे डकार शरीर और भोजन की प्रतिकूलता के द्योतक होते हैं।

शारीरिक विकास के लिये हमें सात्विक भोजन करना चाहिये, क्योंकि यह शरीर के लिये अतिलाभदायक होता है। मांस सात्विक भोजन की अपेक्षा देर से हज़म होता है। इसलिए मांसाहारियों की आयु शाकाहारियों से कम होती है। हमारे जीवन की सब क्रियाओं का आधार भोजन है, क्योंकि जैसे हम भोजन का सेवन करेंगे वैसा हमारा मन होगा और उसी प्रकार के हमारे विचार होंगे। इसलिये उपनिषदों में भोजन को बांधने वाली लम्बी रस्सी कहा गया है। हमारे भोजन में छः रस अर्थात् खट्टा, मीठा, तीखा, खारा, कड़वा आदि होना चाहिए।

आजकल अधिकाँश घरों में भोजन स्वाद की दृष्टि से तैयार किया जाता है न कि स्वास्थ्य की दृष्टि से। रसोई घर में हम प्रतिदिन भोजन का खून करते हैं। जिह्वा के स्वाद के लिये भाँति-भाँति के मसाले डालकर भोजन तैयार किया जाता है। यह सब स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। इसके विषय में एक मसल मशहूर है–

ईश्वर ने हमें भोजन दिया और दैत्य ने उसके पकाने वाला रसोइया।

हमें कच्ची सब्जियाँ भी खानी चाहियें क्योंकि ये स्वास्थ्य की दृष्टि से अधिक लाभदायक होती हैं। यदि कच्ची सब्जियों का सेवन करना हो तो उन्हें मत छीलिए, मत निचोड़िये और अधिक देर पानी में मत धोइए, मंदी आंच में पकाकर खाने वाली सब्जियों को ढककर पकाइये ताकि इनके पौष्टिक तत्त्व नष्ट न हो जायें। जब हमें बड़ी भूख लगे तभी हमें खाना चाहिये। खूब चबाकर खाना चाहिए। अतः किसी विद्वान् ने सत्य ही लिखा है–

भोजन को मुँह में ही खूब चबाइए क्योंकि आप के आंत में दांत नहीं हैं।

इसके अतिरिक्त आटे को मत छानिये क्योंकि चोकर में ही अधिकांश पौष्टिक तत्त्व होते हैं और छने हुए आटे में कॉर्बोहाईड्रेटस ही अधिक रह जाते

हैं । प्रोटीन और विटामिन्स न रहने से कब्ज़, गैस, मोटापा, अजीर्ण, रक्तचाप आदि रोग हो जाते हैं । हम देखते हैं कि रोटी के साथ हरी सब्जी पूरक खाद्य है क्योंकि गेहूँ में प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट्स होते हैं, हरी सब्जियाँ, खनिज लवणों और विटामिन्स की पूर्ति करती हैं । दोपहर के भोजन के साथ मौसम के फल, जैसे आम, ककड़ी, खीरा, केला, खरबूजा आदि खाना चाहिए, क्योंकि फलों से भोजन की पूरकता और पौष्टिकता बढ़ती है । अतः प्रोटीन, वसा, विटामिन, कार्बोहाइड्रेट्स, रासायनिक एवं पानी के एक निश्चित् आनुपातिक मिश्रण को संतुलित भोजन ही कहना चाहिए ।

आहार, शुद्ध, रहन-सहन नियमित विचार-उदार तथा व्यवहार प्रेममय (आहार, व्यवहार, आचार और विचार) ये चहुँमुखी सुख समृद्धि की कुंजियाँ हैं । स्वास्थ्य के प्राकृतिक नियमों को तोड़ने के कारण ही व्यक्ति को दुःख, दर्द एवं रोग भोगने पड़ते हैं । स्वास्थ्य की देवी प्रकृति माता की शरण में जाने से एवं स्वास्थ्य के नियमों पर अमल करने से व्यक्ति सदा स्वस्थ रहता है ।

व्यक्ति, स्वाद, दवाई की पराधीनता एवं स्वास्थ्य के नियमों के अज्ञान और अवहेलना के कारण शरीर के भीतर रोग उत्पन्न करने वाले तत्त्वों को बढ़ाता रहता है । व्यर्थ में दवाओं एवं डॉक्टरों के ऊपर आश्रित रहने की अपेक्षा अपने अंदर उपस्थित डॉक्टर जीवन शक्ति के सहारे आत्मविश्वास और धैर्य से स्वास्थ्य प्राप्त करना रोगों से छुटकारा पाने का सर्वोत्तम उपाय है । विश्व में खाने पीने की गलतियों के कारण बीमार व्यक्ति केवल भोजन सुधार से दवाई के अभाव में भी स्वस्थ हो सकते हैं क्योंकि भोजन सुधार अथवा पथ्याहार के बिना स्थायी स्वास्थ्य सम्भव नहीं है । डॉक्टरी इलाज के प्रवर्त्तक श्रीमान् हेपोक्रेटस ने कितना सुन्दर लिखा है–

पेट नरम, पैर गरम,सिर रखो ठंडा ।
घर में आये रोग तो मारो उसे डंडा ।।

हमारे शरीर के लिये कैसा भोजन उपयोगी है ? इस संबंध में एक छोटी सी कहानी है कि एक बार महर्षि चरक ने वैद्यों की सभा बुलाई और पूछा

आरोग्यता के लिए कैसा भोजन करना चाहिए। श्री वाणभट्ट ने जो अधोलिखित उत्तर दिया वह सबसे संतोषजनक था–

हितभुक, मितभुक, ऋतभुक, कदापि न रोगी स्यात्।

जो व्यक्ति अपने शरीर की प्रकृति के अनुसार हितकर ऋतु के अनुकूल और सीमित मात्रा में अपने परिश्रम की सच्ची कमाई से भोजन करता है, वह कभी भी रोगी नहीं होता। अधिक आयु जीने की कला को जीवन में अपनाएं–

(1) भोजन का आधा करें।

(2) पानी को दो गुणा करें।

(3) व्यायाम को तीन गुणा करें।

(4) हँसने को चार गुणा करें।

4. सम्बन्धित जीवन – मन को संयम में रखने से ही मानव संतुलित मानसिक स्थिति एवं संयमित जीवन व्यतीत कर सकता है। ऐसा करने से उसे मानसिक रोग, चिन्ता, शोक, दुःख आदि मनोविकारों से मुक्ति मिलती है। अतः वह सदा प्रसन्न एवं निश्चिन्त रहने लगता है। हँसना एवं मुस्कराना स्वास्थ्य के लिए परमावश्यक है।

इस कारण व्यक्ति को अपनी इच्छाओं को नियमित, व्यवस्थित एवं मर्यादित करके अपनी दिनचर्या एवं जीवनचर्या को व्यवस्थित करना चाहिये। ऐसा करके ही वह सुखी एवं शान्त रह सकता है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को शारीरिक रूप से स्वस्थ, मानसिक रूप से सन्तुष्ट एवं शान्त, बौद्धिक रूप से जागरूक और आत्मिक रूप से पवित्र एवं पावन होना चाहिये। इसके विषय में श्री कृष्ण ने गीता में कहा है–

विहाय कामान्यः सर्वन्यूमांश्चरति निःस्पृह।
निर्ममो निरहंकारः स शांतिमधि गच्छति।। –गीता 2.71

जो इन्साँ करे ख़्वाइशे दिल से दूर, हवस का न हो, जिसके दिल में फतूर।
न उसमें खुदी हो न मेर तेर सकूँ उसको हासिल है दिल उसका सेर।।

वह व्यक्ति जो सारी कामनाओं का परित्याग करके इच्छा, ममता एवं अहंकाररहित होकर इसमें विचरता है। वस्तुतः उसको ही शांति प्राप्त होती है।

2. विश्राम – विश्राम भी जीवन के लिये उतना ही आवश्यक है जितना कि काम। यदि व्यक्ति विश्राम न करे और अत्यधिक काम करता रहे तो भी उसका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। इसलिए किसी अंग्रेज़ी कवि ने ठीक ही कहा है–

Work while you work; Play while you play
This is the way to be happy and gay.

काम करने के समय काम करो और खेलने के समय खेलो। यही प्रसन्नता प्राप्ति का रहस्य है।

स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिये, व्यक्तियों को छः घंटे सोना परमावश्यक है, इससे शारीरिक शक्तियों का विकास होता है। जागृत अवस्था में शरीर के कार्यरत होने पर स्नायु तन्तुओं में थकान आ जाती है। इसको दूर करके नींद नवीन उत्साह देती है। जैसे यदि हम एक रात भी नहीं सोते तो हमारा शरीर अत्यधिक थकावट अनुभव करता है और ऐसे लगता है जैसे कि हम कई दिनों से बीमार हों। किसी भी कार्य में मन नहीं लगता और काम करते समय नींद के झटके आते हैं। बाई करवट से सोने वाला, दिन में छः बार मूत्रत्याग वाला, दो बार मल त्याग करने वाला, व्यायामशील और ब्रह्मचारी सौ वर्ष तक सुखी जीवन व्यतीत करता है।

6. वस्त्र – हमारे वस्त्र तंग न हों। पेटियाँ, डोरी से बांधे जाने वाले कपड़े कभी कसकर नहीं बांधने चाहिए, क्योंकि इससे रक्तसंचार रुक जाता है। सर्दी में मौसम की आवश्यकता से अधिक वस्त्र धारण नहीं करने चाहिए। वस्तुतः वस्त्र ऐसे छिद्रयुक्त हों उनके द्वारा अधिक से अधिक वायु शरीर को लग सके।

7. रहनसहन – हमारे रहने व सोने के स्थान अधिक से अधिक हवादार, साफ तो होने ही चाहिए, साथ ही उनमें काफी सूर्यप्रकाश भी आना चाहिये। इसलिये डॉ. अरनार्ड रिकली ने कितना सुन्दर लिखा है।

Water is good, but air is better and light is best of all.

जल उत्तम है, परन्तु वायु उत्तमतर है और प्रकाश सर्वोत्तम है ।

आज बड़े नगरों में धनी बस्तियों में पुराने ढंग के मकान हैं, छोटी-छोटी तंग गलियाँ हैं जहाँ पर न शुद्ध वायु पहुँच सकती है न सूर्यप्रकाश । इसके अतिरिक्त इन मकानों में स्थान की कमी होती है जिससे सफाई नहीं रह पाती । ऐसे स्थान प्रायः सीलन और बदबू से भरे रहते हैं । स्वास्थ्यरक्षा के लिये यह अत्यावश्यक है कि हमारे रहने के स्थान वायु एवं धूप के लिये पूर्णतः खुले होने चाहिये ।

8. मोटापे से बचाप – मोटापा स्वयं सब रोगों का मूल है । इससे 30 प्रकार के रोग जैसे रक्तचाप, मधुमेह, हृदयरोग, गठिया, गुर्दों का रोग आदि होते हैं । इसलिये सभी लोगों को इस रोग के प्रति विशेष सावधान होना चाहिये । कम भोजन करके वे अपना भार घटा सकते हैं और यथोचित शारीरिक परिश्रम से शरीर में एकत्रित हुई चर्बी को भी कम कर सकते हैं । कम से कम प्रतिदिन प्रातः भ्रमण करके स्वयं को संतुलित कर सकते हैं । उन्हें घी, मलाई, मिठाई, चावल, आलू, तले हुये खाद्य पदार्थ आदि नहीं खाने चाहिए । इसके अतिरिक्त उत्तानपादासन, सर्वांगासन, पश्चितमोतानासन, हलासन आदि करने चाहियें ।

9. आत्मविश्वास – स्वास्थ्य की आशा, आस्था, विश्वास एवं इच्छा करनी चाहिये । स्वस्थ विचार मन में आने से मानव स्वस्थ हो जाता है । यदि मन से रोग के विरुद्ध विचार न होंगे, तो व्यक्ति स्वस्थ नहीं रह सकता । क्योंकि विश्वास ही जीवननिर्माता सृष्टिकर्ता अर्थात् वृद्धिकर्त्ता और संरक्षक है । इसके अभाव से मानव जीने की आशा भी नहीं कर सकता । जीवन में स्वास्थ्य व सफलता के लिये आत्मविश्वास आवश्यक है । ईसा ने एक बार कहा था–

अपने विश्वास के अनुसार ही आप बन जाओगे ।

10. आत्मसमर्पण – श्री गुरुग्रंथसाहिब में कबीर जी के वचन इसी प्रकार हैं–

मेरा मझ में कुछ नहीं, जो कछु है सब तेरा ।
तेरा तुझ को सौंपते, क्या लागे है मेरा ।।

जब मानव में ऐसी भावना हो तभी इसको समर्पण की भावना कहना चाहिये । प्रभो ! मैं तेरे लिये ही खाता, पीता, कमाता, सोता एवं जीता हूँ । जब ऐसी मानसिक अवस्था उत्पन्न हो जाती है तब मानव वासना से उपासना की ओर, आसक्ति से भक्ति की ओर अग्रसर हो जाता है । तब वह कर्म करता हुआ भी उसमें नहीं फंसता । इसके विषय में तुलसी दास जी ने लिखा है–

तुलसी जग में यूँ रहो, ज्यूं रसना मुख मांहि ।
खाती घी ओ, तेल, नित, फिर भी चिकनी नांहि ।।

जब भक्त के हृदय में प्रभुसमर्पण की भावना का प्रादुर्भाव हो जाता है तो उसमें पूर्ण आस्था हो जाती है । वह समझने लगता है कि प्रभु जो भी करते हैं उसके भले के लिये ही करते हैं । ऐसी आस्था एवं श्रद्धा जिसके मन में है वह कभी भी डाँवाडोल नहीं होता, चाहे कुछ भी हो । ऐसा व्यक्ति परमेश्वर एवं मृत्यु को सदा याद रखता है और कभी भी कुकर्म नहीं करता । नारायण कवि ने सत्य ही कहा है–

दो बातन को भूल मत, जो चाहे कल्याण ।
नारायण इक मौत को, दूजे श्री भगवान् ।।

स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य के लिये प्रभुसमर्पण होना परमावश्यक है । ऐसा करने से उसके सारे दुःख दूर हो जाते हैं ।

7. आर्थिक प्रगति

हमें भौतिक शरीर की रक्षा के लिये भौतिक पदार्थों की आवश्यकता होती है। हमारे शरीर की मुख्य भौतिक आवश्यकताएँ रोटी, कपड़ा और मकान की प्राप्ति धन से होती हे। इसलिए कबीर ने सत्य ही कहा है–

भूखे होये न भजन गोपाला। यह लो अपनी कंठी माला।।

नत्था सिंह 'निर्दोष' अपने गीत में लिखते हैं–

पैसा कोई खास तो सहारा नहीं,
जीवन का लक्ष्य यह हमारा नहीं।
लेकिन इन्सान का, सारे जहान का
पैसे बगैर भी गुजारा नहीं।
पैसा गर आप न कमाएं
तो कहाँ से पहने और खाएं।
रस्मो-रिवाज का चारे अनाज का
गरज़े कि आरे कोई चारा नहीं।
गृहस्थी हो या कोई त्यागी,
रोगी हो या कोई बैरागी।
कलियुग के दौर में, किसी भी तौर में
धन का बिछोड़ा गवारा नहीं।
इल्मों अदालत या दवाई
निर्धन की कहीं न रसाई।
अपने हैं गैर, पैसे बगैर तो,
बेटा भी बाप का प्यारा नहीं।
पर पापों से इसे न कमाओ,
ज़हर न कुटुम्ब को पिलाओ।
क्योंकि भलाई बिन, धर्म की कमाई बिन,
कोई भी साथी तुम्हारा नहीं।

नत्था सिंह यह है मजबूरी जीवन निर्वाह है जरूरी,
लेकिन विचार कर, हीरा जन्म धारकर
जन्मों का कर्ज़ क्यों उतारा नहीं ।

परन्तु धन तो सुखी जीवन का एक साधन है साध्य नहीं । जीवन में धन ही सब कुछ नहीं होता । यदि धन सब कुछ होता तो कोई भी धनी कभी भी बीमार न होता, ना ही कभी दुःखी होता न ही प्रभु का प्यारा होता । परन्तु ऐसा नहीं है क्योंकि सब धनी बीमार भी होते हैं, दुःखी भी होते हैं और प्रभु को प्यारे भी होते हैं । सत्य यह है कि धन से बहुत कुछ खरीदा जा सकता है परन्तु सब कुछ नहीं खरीदा जा सकता । जैसे कि एक कवि के शब्दों में–

कोई इतना अमीर नहीं होता । कि अपना गुजरा हुआ कल खरीद सके । ।
कोई इतना ग़रीब नहीं होता । कि अपना आने वाला कल न बदल सके । ।

सत्य तो यह है कि–

1. **धन से पाऊडर मिल सकता है, प्राकृतिक सौंदर्य नहीं ।**
2. **धन से अध्यापक मिल सकता है, सच्चा गुरु नहीं ।**
3. **धन से किताबें मिल सकती हैं, विद्या नहीं ।**
4. **धन से ज़मीन मिल सकती है ज़िन्दगी नहीं ।**
5. **धन से फाऊंटेन पैन मिल सकता है, सुलेख नहीं ।**
6. **धन से लड़का मिल सकता है, पुत्र नहीं ।**
7. **धन से सुन्दरी मिल सकती है, धर्मपत्नी नहीं ।**
8. **धन से नाई मिल सकता है, भाई नहीं ।**
9. **धन से मंदिर मिल सकता है, भगवान् नहीं ।**
10. **धन से नौकर मिल सकता है, सच्चा सेवक नहीं ।**
11. **धन से मित्र मिल सकता है, चरित्र नहीं ।**
12. **धन से झूठी शान मिल सकती है, शांति नहीं ।**
13. **धन से अन्न मिल सकता है, आनन्द नहीं ।**
14. **धन से तोप मिल सकती है, सन्तोष नहीं ।**
15. **धन से भोजन मिल सकता है, भूख नहीं ।**

16. धन से पलंग मिल सकता है, नींद नहीं ।

17. धन से शस्त्र मिल सकता है, साहस नहीं ।

18. धन से मोटर मिल सकती है, पैर नहीं ।

19. धन से दवाइयाँ मिल सकती है, स्वास्थ्य नहीं ।

20. धन से विष मिल सकता है, अमृतादि नहीं ।

कवि नरदेव ने लिखा है–

धन वालो ! क्यों करते हो अभिमान यहाँ
धन से नहीं मिलता है सब समान यहाँ । ।

इसी प्रकार एक उर्दू शायर ने लिखा है–

मिला है जीवन किसी के काम आने के लिये ।
समय बीत रहा काग़ज़ के टुकड़े कमाने के लिये ।
क्या करोगे इतना रुपया पैसा कमा कर ।
न कफ़न में ज़ेब है न क़ब्र में अलमारी । ।

अध्यात्म पथ पर बढ़ने के लिये मन का निर्मल होना जरूरी है । निश्छल होना जरूरी है । अध्यात्म और भौतिक प्रगति में एक संतुलन होना भी जरूरी है । लेकिन आज जो अध्यात्मवादी है आज वे भी संतुलन खो रहे हैं । अध्यात्मवाद को भौतिकवाद से जोड़ रहे हैं, अध्यात्म को अपने भौतिक सुखों का एक साधन बना रहे हैं । सीख तो परमात्मा को पाने की देते हैं, लेकिन स्वयं परमात्मा के पथ से दूर होते जा रहे हैं.....वस्त्र तो संतों के पहनते हैं, लेकिन भौतिकता में उलझ कर अपने लिये हर तरह के सुख साधन जुटाते हैं ।

एक सम्राट् बीमार हो गया । गम्भीर रोग से ग्रस्त हो गया । बहुत उपचार हुआ । लेकिन कोई फर्क नहीं पड़ा । डॉक्टरों ने जवाब दे दिया । सम्राट् सब ओर से निराश हो गया, मंत्रियों और सेवकों ने बड़ी भाग दौड़ की । आखिर उन्हें एक फ़कीर मिले । फ़कीर ने कहा, आपका सम्राट् ठीक हो सकता है । किन्तु उसे किसी सुखी व्यक्ति के वस्त्र पहनाने होंगे । यदि तुम ऐसे व्यक्ति को ढूँढ़ सको तो उसके कपड़े लाकर सम्राट् को पहना दो । संध्या तक सम्राट् ठीक हो जायेगा ।

मंत्री और राज कर्मचारी खुश हुए। ऐसा व्यक्ति ढूँढना मुश्किल नहीं था। राजधानी में अनेकों धनवान् और सुखी व्यक्ति थे। सेवक नगर के धनपति के पास गए। सम्राट् के ठीक होने के लिए फ़कीर की बात दोहराई। धनपति ने कहा, मैं अपने सम्राट् के लिए अपने प्राण तक देने को तैयार हूँ, लेकिन मेरे वस्त्र आपके काम नहीं आएंगे, क्योंकि मैं सुखी नहीं हूँ, धन तो है, लेकिन सुख नहीं है। मंत्री निराश हुए। नगर के ओर-छोर में लोगों से भी, जो उनके विचार में समृद्ध और सुखी हो सकते थे मिले लेकिन किसी ने भी यह नहीं कहा कि वह वास्तव में सुखी है।

जब सभी मंत्री और राज कर्मचारी दिन भर की भाग दौड़ के बाद महल में लौटे, तो उनके चेहरे उतरे हुए थे क्योंकि नगर में धनवान् तो बहुत थे, लेकिन सुखी कोई भी नहीं था...तभी रात हो गई। सम्राट् का जीवन समाप्त होने वाला था, अचानक मंत्रियों की नजर राजमहल के पिछवाड़े में बहने वाली नदी के किनारे खड़े एक व्यक्ति पर पड़ी जो अपनी मस्ती में, दुनियाँ की भीड़ और भाग दौड़ से अलग होकर, सुख-दुःख से निरपेक्ष होकर, बांसुरी बजा रहा था।

मंत्रियों के मन में आशा की एक किरण जागी। उस व्यक्ति के पास गए। अंधेरा था, वे उस व्यक्ति को ठीक तरह से देख नहीं पा रहे थे। एक चट्टान पर बैठे उस व्यक्ति से मंत्रियों ने फ़कीर की बात दोहराई... वह व्यक्ति बोला, मुझे दुःख है, सम्राट् मरणासन्न है। मैं तो उनको बचाने के लिये अपने प्राण तक देने को तैयार हूँ... लेकिन शायद आप मुझे अच्छी तरह देख नहीं पा रहे.... मैं तो बिल्कुल नंगा हूँ.... कोई भी वस्त्र मेरे शरीर पर नहीं है, क्या दूँ उतार कर, आपको? सुन कर मंत्री निराश हो गये और फिर उसी रात सम्राट् की मौत हो गई।

इस दृष्टांत से यह स्पष्ट है कि भौतिक सम्पत्ति से ही सुख शांति मिल जाए यह संभव नहीं। एक नंगा फ़कीर भी सुखी हो सकता है यदि उसमें आत्मसंतोष और ईश्वर के प्रति समर्पण हो। धनवान् होना एक अलग बात है, सुखी होना अलग...जो धनवान् है, यह जरूरी नहीं वे सुखी भी हैं। सुख

परमात्मा की कृपा के बिना नहीं मिल सकता। लेकिन धनवान् के मन के किसी कोने में अपने धन का अहम् अवश्य होता है और जब वह अपने धन और यश की चर्चा करता है, तो प्रभुकृपा की चर्चा करना भूल जाता है। यह तो कहता है, मेरा धन है, मैंने कमाया है, यह नहीं कहता प्रभुकृपा से मिला है। यहीं वह भूल कर जाता है, इसीलिये धनवान् सुखी नहीं है।

अब प्रश्न उठता है कि हम निर्धन क्यों है? इसके भी अधोलिखित कई कारण हैं–

(1) हमारे समाज में कुछ लोग रोगी और अपाहिज हैं वे अपनी आजीविका कमाने में असमर्थ हैं।

(2) कुछ लोग बेकार हैं। उन्हें भरसक प्रयत्न के बाद भी वह काम नहीं मिलता जो कि वे करना चाहते हैं।

(3) कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जो काफी मात्रा में धन कमाते हैं परन्तु व्यसनों और विलासिता में बिना सोचे समझे खर्च कर देते हैं।

(4) अनेकों व्यक्ति अपनी आय का ध्यान न रखकर अधिक बच्चे पैदा कर लेते हैं और इस प्रकार आय थोड़ी होने के कारण ग़रीबी का शिकार हो जाते हैं।

(5) अनेकों व्यक्ति फैशन ठाठ, बाट, सजावट, अतिथि सत्कार आदि पर फिजूल खर्च कर के स्वयं ग़रीबी को निमंत्रण देते हैं।

(6) कुछ सामाजिक कुप्रथाएं होने के कारण भी हम ग़रीब हैं जैसे दहेज प्रथा, ब्रह्मभोज, श्राद्ध, तीर्थयात्रा और अन्य आयोजनों पर बेहताशा व्यय आदि भी हमारी ग़रीबी का कारण है इन सब सामाजिक बुराइयों को दूर करना चाहिये।

(7) धन-अनुपात में अंतर अत्यधिक है जैसे संसार के 204 विभिन्न देशों के केवल 8 व्यक्तियों के पास आधा धन है और शेष सब व्यक्तियों के पास आधा। इसी प्रकार भारत में 9 व्यक्तियों के पास आधा धन है शेष सब व्यक्तियों के पास आधा। यदि यह अंतर कम हो जाये तो ग़रीबी स्वतः ही समाप्त हो जायेगी।

(8) सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हम संतुष्ट नहीं है जब व्यक्ति को संतोष प्राप्त हो जाता है तो थोड़े धन में भी गुजारा हो जाता है । परन्तु जब संतोष नहीं होता तो अधिक धन में भी गुजारा नहीं होता न सुख एवं शान्ति मिलती है, क्योंकि संतोष परमसुख है । इसी प्रकार संतोष रूपी भाव को किसी अंग्रेज़ी कवि ने कितने सुन्दर शब्दों में इस प्रकार वर्णन किया है ।

Some have too much, yet still they crave
They are poor, though much they have
I have little and seek no more
And I am rich with little store

अतः अमीरी ग़रीबी हमारे भाग्य से नहीं अपितु व्यक्ति की योग्यता, परिस्थितियों और धन के खर्च करने पर निर्भर करती है ।

आज बेईमानी का इतना अधिक साम्राज्य छा गया है कि व्यक्ति अपने प्रति भी ईमानदार नहीं । परिवार, समाज की तो बात ही क्या है आज धन के कारण ही हम अपने सगे संबंधियों को धोखा दे रहे हैं । किसी उर्दू शायर ने ठीक ही लिखा है–

तालीम का शोर इतना, तहजीब का जोर इतना ।
वरकत जो नहीं होती, नीयत की खराबी है । ।

अजी छोड़िये साधारण व्यक्ति की बात । आज भौतिकता का बोलबाला है । अधिकांश व्यक्ति धन को ही सब कुछ समझते हैं । धन के पीछे पागल हैं । नारायण का भी लक्ष्मी के बिना गुजारा नहीं है पहले लक्ष्मी बाद में नारायण, तब बनता है–''लक्ष्मी नारायण'' । इसी धन लिप्सा के बारे में निम्नलिखित कहानी प्रस्तुत है ।

एक दिन नारायण लक्ष्मी से बोले देख, सारी दुनियाँ मेरी भक्त बन गई है । नारायण नारायण का जाप करती रहती है । लक्ष्मी ने उत्तर दिया बहुत बढ़ चढ़ कर बातें मत बनाइये । यह आपकी भक्ति नहीं हो रही यह मेरी भक्ति हो रही है ताकि मैं उनके पास पहुँच जाऊँ । नारायण बोले नहीं लक्ष्मी, तू भ्रम में है । सब मेरे भक्त बन गये हैं । लक्ष्मी जी कहने लगी–अच्छा, यदि आप इसे मेरा भ्रम समझते हैं तो आओ देखें कि दुनियाँ आपको चाहती है या

मुझे चाहती है ।

नारायण ने पूछा कैसे? लक्ष्मी जी ने सुनाया, आप ब्राह्मण का रूप धारण कर लीजिए । किसी गाँव में जाकर कथा शुरू कर दीजिए । जब कथा में खूब रौनक बढ़ जायेगी, मैं भी बुढ़िया की वेश-भूषा में लाठी टेकती-टेकती उस गाँव में पहुँच जाऊँगी । तब देखोगे कि दुनियाँ आपको चाहती है या मुझको चाहती है । नारायण ने कहा—तथास्तु ।

योजना बन गई । नारायण ने सफेद पगड़ी पहन ली, तिलक लगा लिया, लाँग वाली धोती पहन ली, गले में माला भी लटका ली । नारायण-नारायण का रट लगाते हुए एक गाँव में चले गये । वहीं पहुँचकर ऊँची आवाज़ में जयकार की ''नारायण'' । एक सेठ ने सुनकर कहा आओ महाराज हमारा गाँव आपके यहाँ पाँव रखने से पवित्र हो गया । आइये, मेरे पास ठहरिये । ब्राह्मण ने कहा—मैं ठहरने के लिये नहीं आया, कथा करने के लिए आया हूँ ।

सेठ बोला, हाँ हाँ महाराज । आप क्यों धर्मशाला में ठहरेंगे, मेरे मकान में चलिये । नारायण जी ब्राह्मण के रूप में सेठ के मकान में ठहर गये । धर्मशाला में कथा आरम्भ हो गई । पहले दिन थोड़े लोग कथा सुनने आये फिर लोगों की संख्या बढ़ने लगी । होते-होते सारी धर्मशाला का आँगन भर गया ।

उधर लक्ष्मी जी ने देखा कि अब कथा में खूब रौनक हो चुकी है । वह भी चल पड़ी । बुढ़िया के रूप में लाठी टेकती-टेकती और ठीक उस समय गाँव में प्रवेश किया जब कथा आरम्भ होने वाली थी । एक देवी मकान बंद करके कथा में पहुँचने वाली थी । लक्ष्मी जी ने उसे कहा बेटी ! बड़ी प्यास लगी है, जरा पानी पिला दे । वह देवी कुढ़कर बोल उठी, ऐ बुढ़िया कब आ मरी है, कथा आरम्भ होने वाली है अगर देर से गई तो पता नहीं बैठने को स्थान मिलेगा या नहीं । लक्ष्मी जी ने उसे गिड़गिड़ाकर कहा बच्ची? पानी तो पिला जा ।

उस देवी को दया आ गई । वह मकान के अंदर गई और लोटा भरकर ले आई । झिड़कती हुई बोली, ले पी मर । लक्ष्मी जी ने उसके हाथ से लोटा

लिया और पानी पीकर लोटा लौटा दिया । उस देवी ने लोटा पकड़ा तो क्या देखती है कि लोटा तो सोने का बन गया है । वह आश्चर्य से कहने लगी माँ । मैंने तो लोटा पीतल का दिया था । लक्ष्मी जी ने कहा हाँ बच्ची ! मैं जिस बर्तन को हाथ लगाती हूँ वह सोने का हो जाता है । देवी बहुत खुश हुई । उसने कहा नहीं-नहीं माँ बाहर क्यों खड़ी है ? तू अंदर आजा न ।

लक्ष्मी जी कहने लगी नहीं अभी मैं गाँव में घूमूँगी और यह कहकर वह गाँव में घूमने के लिये चली गई । इधर उस देवी ने कथा स्थल पर जाकर यह घटना सुनाई कि एक बूढ़ी आई है । वह जिस बर्तन को हाथ लगा देती है वह सोने का हो जाता है । अब सब लोग उस बुढ़िया की मिन्नत करने लगे । माँ ! हमारे घर चल न ! चाय पीले ! दूध पी ले । कुछ तो पीले । खीर खा ले न !.... पानी का एक घूँट ही भर ले ।.....अच्छा ! एक चम्मच को ही हाथ लगा दे । लो जी कथा में लोग कम होने लगे । एक दिन कथा में पाँच सात आदमी ही रह गये । तो नारायण जी ने आश्चर्य से पूछा ! क्यों भई तुम्हारे गाँव में क्या फ्लू आ गया है ? लोग आते क्यों नहीं ।

एक भक्त ने उत्तर दिया यह फ्लू के कारण नहीं एक बुढ़िया गाँव में आई हुई है । वह जिस बर्तन को हाथ लगाती है, वही सोने का हो जाता है । सब उसकी ओर जा रहे हैं । नारायण समझ गये कि वहाँ लक्ष्मी आ गई है । होते-होते सेठ को भी पता लगा । वह भी पहुँचा बुढ़िया के पास । उससे बोला माँ ! बुढ़िया ने पूछा कहो बच्चा ! माँ हमारे भी घर अपने चरण धरो ना ! सेठ ने कहा ।

हाँ-हाँ, तुम्हारे घर भी चलूँगी । मगर मैंने सुना है कि तुम्हारे घर में कोई कथा करने वाला पंडित ठहरा हुआ है । हाँ माँ, ठहरा हुआ है । तो पहले उसको घर से निकाल, तब मैं तुम्हारे घर आऊँगी । लक्ष्मी जी ने शर्त लगा दी । सेठ जी झट से बोले अभी निकालता हूँ, अभी यह कहकर वह घर पहुँचा और बोला पंडित जी महाराज ! देखिये, मैंने इतने दिन आपकी सेवा कर दी है । पंडित जी–"हाँ भाई की है । अब तुम क्या चाहते हो ? सेठ जी बोले अब मैं आप का बिस्तर धर्मशाला में छोड़ आता हूँ । ब्राह्मण वेशधारी नारायण ने पूछा, वहाँ क्यों छोड़ आयेगा ।

सेठ को तो जल्दी मची हुई थी। वह पंडित के प्रश्नों से तंग आकर बोला, देखो, अभी तक तो मैंने आप का मान बनाये रखा। अगर आप सीधी तरह नहीं मानोगे तो मैं आपका बोरिया-बिस्तर उठाकर गली में फेंक दूँगा। इतने में आ गई लक्ष्मी जी! वह अपने पति का अपमान सहन नहीं कर सकती थी। वह सेठ जी से बोली, सेठ जी! आप जाओ हम स्वयं आपस में निपट लेंगे। जब सेठ जी चले गये तो लक्ष्मी जी बोली कहिये भगवन्! अब बताइये कि दुनियाँ नारायण को चाहती है या लक्ष्मी को?

नारायण जी समझ गये कि लोगों के होठों पर तो एक ही रट है 'हाय लक्ष्मी'। हम पूर्णतः भौतिकवादी बन चुके हैं और आध्यात्मिकता को छोड़ते जा रहे हैं। ज्यों-ज्यों हम भौतिकवादी बन रहे हैं, हमारी मन की शाति, सद्भावना और सहानुभूति घटती जा रही हैं ये सब पश्चिमी सभ्यता का कुप्रभाव है। पश्चिमी सभ्यता के रंग में बिना सोचे समझे रंग चुके हैं। इसके विषय में एक उर्दू शायर ने ''दुनियाँ'' नामक कविता में कितना सुन्दर लिखा है–

हैं गली गली में मयखाने होठों की लज़्ज़त बिकती है।
आँखों के सौदे होते हैं, वो सों की हरारत बिकती है।।
सोने चाँदी के सिक्कों पर मजबूर की इज़्ज़त बिकती है।
तहजीव के ज़ुल्वागाहों में, बेकस की असमत बिकती है।
रातों के अंधेरे में कितने महताब बदन बिक जाते हैं।
आँखों का काज़ल बिकता है उजले दामन बिक जाते हैं।
इस तन को छिपाने की खातिर, मुर्दो के कफ़न बिक जाते हैं।
फूलों के गाहक फिरते हैं, शादाब चमन बिक जाते हैं।
यह दुनियाँ एक मंडी है, हर चीज़ यहाँ बिकती है।
इज़्ज़त बिकती है, शराफत बिकती है,
पूजा पाठ और इबादत बिकती है।
मरघटें, क़ब्रें बिकती हैं, दरगाह में नज़रें बिकती हैं।
वेद, शास्त्र, पुराण हैं बिकते, गीता और क़ुरान हैं बिकते।

मज़लूमों का तन बिकता है, तन तो क्या मूर्दों का कफ़न बिकता है ।
अच्छा ख़ुदा तू पर्दे में है, वरना ये दुनियाँ वाले तुझे भी बेच डालें ।
पर तेरा पता इन्हें नहीं मालूम, नहीं मालूम, नहीं मालूम हैं ।

धन में कोई बुराई नहीं है, परन्तु यदि आप इसका दुरुपयोग करते हैं तो धन के दास बन जाते हैं । यदि इसका सदुपयोग करते हैं तो इसके स्वामी बन जाते हैं । वस्तुतः वही भाग्यशाली है जो धन का अनावश्यक संग्रह न करके इसको शुभ कार्यों में व्यय करता है । एक उर्दू शायर के शब्दों में–

धन जोड़ जोड़ कर रखने से, न भूख लगे न नींद पड़े ।
धन को शुभ कार्यों में लगाने से, खुशियों की दौलत मिलती है ।।

धन जीवन में आवश्यक तो है परन्तु यही सब कुछ नहीं क्योंकि यह साधन है परन्तु साध्य नहीं है । इसलिये साध्य मानकर इसका पूजन करना अच्छा नहीं ।

8. आत्मिक उन्नति

शारीरिक और आर्थिक विकास के साथ आत्मिक उन्नति भी मानव जीवन में परमावश्यक है। इसलिये आत्मा के विषय में कुछ जानना आवश्यक है। आत्मा मानव शरीर का राष्ट्रपति है और हमारे बाल के सिरे का 10,000वाँ भाग के बराबर होता है। आत्मा का अर्थ है–''मैं''। आत्मा जागृतावस्था में आँखों में, स्वप्नावस्था में कंठ में और सुप्तावस्था में हृदय में रहती है।

अतः केवल भोजन करना, अन्य वस्तुओं का सेवन, सोना, सन्तान उत्पन्न करना ही इस मानव जीवन का उद्देश्य नहीं है। आधुनिक युग में अधिकतर लोग Epicurian Philosophy में विश्वास रखते हैं। इसका भाव यह है कि मिश्र में एक Epicure नामक दार्शनिक हुए हैं। वे कहा करते थे–

Eat Drink and be merry because tomorrow we may die.

खाओ, पिओ, आनन्द मनाओ कल किसने देखा है।

एक हिन्दी कवि ने लिखा है–

पेट भरा सो गया मालिक से न की बात।
हम से कुत्ता भला जो जागे सारी रात।।

परन्तु यह सिद्धांत वैदिक धर्म के विरुद्ध है। यदि मानव जीवन का यही उद्देश्य है तो मानव और पशु में क्या अंतर है? ऐसे विचार हमें मानव स्तर से गिराते हैं और आत्मिक उन्नति में बाधा डालते हैं।

इसके विषय में एक शिक्षाप्रद कहानी प्रस्तुत करना चाहता हूँ कि एक बार की बात है कि बारह यात्री तीर्थयात्रा के लिये निकले। मार्ग में एक नदी आती थी न कोई पुल था न नाव थी। इन यात्रियों में से एक बुद्धिमान व्यक्ति था उसने कहा–''देखो, घबराओ नहीं नदी को अवश्य पार करना है। सब लोग एक-दूसरे का हाथ पकड़ लो। हम सब मिलकर पार हो जायेंगे'' सबने दृढ़ता से हाथ पकड़ लिया और नदी को पार कर लिया। बुद्धिमान व्यक्ति ने कहा–''अब गिनती कर लो कि कहीं कोई नदी में तो नहीं डूब गया। दूसरे

व्यक्ति ने कहा–''सबसे अधिक बुद्धिमान व्यक्ति तो आप ही हैं और आप ही गिनो।''

उसने गिनना आरम्भ किया और एक से लेकर ग्यारह तक सबको गिन डाला और स्वयं को गिनना छोड़ दिया। वह चौक कर बोला–ये तो ग्यारह हैं एक व्यक्ति कहाँ गया?''

दूसरे व्यक्ति ने कहा–''ठहरो मैं गिनता हूँ।''

उसने भी स्वयं को छोड़ दिया और कहा, ''ये तो ग्यारह हैं।'''

सब व्यक्तियों ने ऐसे ही किया। सब ने ही स्वयं को गिनना छोड़ दिया। सबने ही ग्यारह ही गिने और लगे रोने कि एक व्यक्ति डूब गया। वे रो ही रहे थे कि एक और यात्री आया और उसने पूछा–''क्या हुआ है भाई! तुम रोते क्यों हो? उन्होंने कहा–जब हम यात्रा पर चले थे तो बारह थे। नदी को पार करते हुए एक व्यक्ति डूब गया। अब ग्यारह शेष रह गये हैं। इसलिये रो रहे हैं।

उस व्यक्ति ने एक दृष्टि में उन्हें देखा कि ये तो बारह है तब बोला–''देखो, यदि मैं तुम्हारे बारहवें यात्री को खोज दूं तो? वे बोले–''तब तो हम तुम्हें भगवान् मान लेंगे। उसने कहा–''बहुत अच्छा! सब बैठ जाओ। मैं प्रत्येक व्यक्ति के मुख पर चपत मारूँगा जिसे पहली चपत लगे वह कहे एक जिसे दूसरी लगे, वह कहे दो। इसी प्रकार सब बोलते जाओ।''

वे सब बैठ गये। उस यात्री ने पहले व्यक्ति के मुख पर चपत मारकर कहा–''एक'' पहले ने कहा–''हाँ एक''। इसके बाद दूसरे के मुख पर चपत मारकर कहा–दो। दूसरे ने कहा–''हाँ दो''। इसी प्रकार सबने ही किया। सब प्रसन्न हो गये कि उनको बारहवाँ साथी मिल गया। सबने चपत मारने वाले को कहा–

''आप तो हमारे भगवान् हैं।''

आपको इन यात्रियों की मूर्खता पर हँसी आती है। परन्तु सोचकर देखो हम स्वयं क्या कर रहे हैं? हम बारह यात्री चले थे जीवन की यात्रा पर

''पाँच कर्मेन्द्रियाँ–हाथ, पैर, वाणी, मलद्वार, मूत्रद्वार, पांच ज्ञानेन्द्रियाँ– आँख, कान, नाक, रसना और त्वचा ग्यारहवाँ मन और बारहवाँ आत्मा। हमने आत्मा को भुला दिया ग्यारह ही ग्यारह दिखाई देते हैं। बारहवाँ दृष्टिगोचर ही नहीं होता। इन ग्यारह के लिये हम सब कुछ करते हैं। सारा दिन धन कमाने के लिये या कामवासना की पूर्ति के लिये ही लगे रहते हैं। आत्मा के लिए कुछ भी नहीं करते। इन ग्यारह को हम प्रत्येक प्रकार भोजन देते हैं। आत्मा को हमने भूखा बैठा रखा है। अतः मानव दुःखी है, अशांत है, कहीं भी उसे शान्ति नहीं मिलती। अतः नत्था सिंह जी ने इसके विषय में ''आज की खबर'' नामक कितनी सुन्दर कविता लिखी है जरा देखिए–

आज की ये हैं खबर, हुई दुनियाँ बे खबर,
नहीं मरने की फ़िकर, नहीं भगवान् का डर।
आज की ये हैं ख़बर।
आज का आदमी हर तौर कमाए पैसा,
पुण्य से न सही, तो पाप से आए पैसा,
रात को सपने में कहता है हाय पैसा,
प्राण तो निकले मगर निकल न जाए पैसा,
बना पैसे के लिए बाप का क़ातिल है पिसर (बेटा)।।1।।

जो बदी से डरता है उसे डराये दुनियाँ
जो अकड़त है उसे शीश झुकाए दुनियाँ,
नेक इन्सान को खातर में न लाए दुनियाँ,
उल्टे दरिया में कहीं डूब न जाए दुनियाँ,
हो जबरदस्त जिधर,सारी दुनिया है उधर।।2।।

कुदरती हुसन भी सजता नहीं, सजावट के बिना,
तेल खालिस तो है पर तरावट के बिना,
आज लीडर भी नहीं बनता बनावट के बिना,
जहर भी आज नहीं मिलता मिलावट के बिना,
दिल भी खालिस नहीं है, न है खालिस है जिगर।।3।।

बनी दहेज की लानत बड़ी बीमारी है,
तभी ग़रीब की कन्या अभी कुँवारी है,
लड़का नीलामी में है बाप भी व्यापारी है,
लड़की के घर मुफ़लसी, लाचारी है ।
धन पे ससुराल के हैं लड़के की नज़र । ।4 । ।

शीशा इखलाक़ का गिरकर चकनाचूर हुआ,
भला भी आज बुरा बनने को मजबूर हुआ,
आदमी आज दरिन्दे से भी मशहूर हुआ,
आज इन्सान से ईमान कोसों दूर हुआ,
डर है कि ईमान को भी बेच न खाए यह बशर । ।5 । ।

बच्चा इंसान का बच्चों को उठाता चोरी,
चोरी-चोरी ये चोर सिखाता उनको चोरी,
देश का चोर बाहर सोना ले जाता चोरी,
घट घट वासी से ये चोर छिपाता चोरी ।
ऐसा बिगड़ा है बशर जाने किसका असर । ।6 । ।
धर्म और स्यासत में धड़ेबाजी है
आदमी दंगे फसादों में बड़ा राज़ी है,
'नत्था सिंह' ' दुनियाँ बनी सारी जालसाज़ी है,
आज जो जूते चुराता, वो नमाज़ी है,
देखकर शर्म का भी चकराता सर । ।7 । ।

अब प्रश्न उठता है कि किस प्रकार हम अपनी आत्मिक उन्नति कर सकते हैं–

आत्मोन्नति के लिए यह परमावश्यक है कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और ईर्ष्या के स्थान पर क्रमशः कामना, मन्यु, प्रयत्न एवं पुरुषार्थ, स्नेह, आत्मगौरव और प्रेरणा होनी चाहिये । प्रस्तुत परिप्रेक्ष्य में इतना ही

कहना प्रचुर होगा कि मानव सुखी तभी होगा यदि वह अशिवों को त्याग कर अपने जीवन में शिवों से ओतप्रोत करेगा। ऐसा तभी होता है, जब प्रभुकृपा होती है। विश्वकवि तुलसीदास ने ''रामचरितमानस'' के अरण्यकाण्ड में सत्य ही लिखा है–

क्रोध, मनोज, लोभ, मद, माया। छूटहिं सकल राम की दाया।।
सो नर इन्द्र जाल नहिं भूला। जापर होइ नट अनुकूला।।

–38(ख).2

ये पंचविकार प्रभुकृपा से ही छूटते हैं और जिस व्यक्ति पर उसकी कृपा होती है वह सांसारिक बंधनों में नहीं बंधता। स्वामी विवेकानंद ने आत्मोन्नति विकास पर प्रकाश डालते हुये कहा है–

Spirituality does not exist in books or in theories or in philosophies. It is not in learning or reasoning but in actual inner growth.

आध्यात्मिकता पुस्तकों, सिद्धान्तों, दर्शनों आदि में नहीं पाई जाती। यह ज्ञान और तर्क में भी नहीं परन्तु मानव की वास्तविक आत्मिक उन्नति में निहित है।

अब हम आत्मिक उन्नति विकास मुख्य साधनों का विवेचन निम्नलिखित शीर्षक के अंतर्गत करते हैं–

1. आत्मनिरीक्षण – सदा प्रतिदिन नियमित रूप से रात को सोने से पूर्व अपने दोषों का आत्मनिरिक्षण करना चाहिये ताकि इन दोषों को दूर किया जा सके। हमें सदा अपने दोषों और दूसरों के गुणों को ही देखना चाहिये ताकि उन गुणों का ग्रहण और दोषों को छोड़ करके हम गुणी बन सके। केवल अध्यापक, डॉक्टर और वकील को ही दूसरों के दोष देखने चाहियें। यह आत्म उन्नति का अमोघ साधन है। यदि हम स्वयं को सुधार ले तो पूरे विश्व को सुधार सकते हैं।

2. प्रायश्चित – अपने किये हुए कर्मों का फल तो हमें अवश्य ही भोगना पड़ेगा। परन्तु ईश्वर के समक्ष यदि हम अपने दोषों और पापों का प्रायश्चित करते हैं तो उन कर्मफलों को भोगने की हमारी सहनशीलता बढ़ती

है । प्रायश्चित करने से भविष्य में पाप कर्म करने से बच जाते हैं । प्रायश्चित का तभी लाभ है कि हम अपने दोषों को दूर करके गुणों को ग्रहण करें ।

3. स्वाध्याय – हमें आर्ष ग्रंथों-वेद, उपनिषद्, दर्शन, सत्यार्थप्रकाश आदि ऋषिकृत ग्रंथों का स्वाध्याय करना चाहिए । इसके साथ ही इन ग्रंथों का मनन व आत्मसात् भी करना चाहिये तभी हमारा आत्मिक विकास होगा । इसके विषय में 'शतपथ ब्राह्मण' में इस प्रकार लिखा है–

स्वाध्याये नै ब्रह्म यज्ञः । प्रिये स्वाध्याय प्रवचने भक्तः युक्त मनाभवति अपराधीनः अहरहार्थान् साधयते सुखं स्वपिलि परमचिकित्सक आत्मोभवति ।

स्वाध्याय निश्चय से ब्रह्मयज्ञ है । अच्छे मनुष्यों को स्वाध्याय और प्रवचन प्रिय होते हैं । भली-भाँति स्वाध्याय करने वाले का मन एकाग्र हो जाता है । वह इन्द्रियों के अधीन नहीं रहता । वह प्रतिदिन अपने मनोरथों को सिद्ध कर लेता है । वह दिन में परिश्रम के कारण रात को सिद्ध कर लेता है । इसलिए स्वामी सत्यानंद जी ने सत्य ही लिखा है–

स्वाध्याय और सत्संग हमारे सच्चे मित्र हैं ।

4. सत्संग – सत्संग चार प्रकार का होता है । प्रभुप्रेम और उनका मधुर मिलन ही सर्वश्रेष्ठ एवं वास्तविक सत्संग है । दूसरी प्रकार का ज्ञानी एवं महात्माओं का सत्संग है । तीसरी प्रकार भक्तों का सत्संग है और चौथी प्रकार का आर्ष ग्रंथों एवं सत् शास्त्रों का स्वाध्याय ही सत्संग है । सत्संग पारस है । इसमें सच्चा होकर जो लग गया, वह सोना हो गया । इसके अतिरिक्त बाइबल में ईसा मसीह भी कहते हें कि चार प्रकार की रोशनियाँ हैं–

1. **सूर्य की रोशनी (Sun Light)**
2. **चन्द्रमा की रोशनी (Moon light)**
3. **अग्नि की रोशनी (Fire light)**
4. **दिव्य ज्योति (Divine Light)**

इनमें से पहली तीन रोशनियों का तो सभी प्राणी (मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट, पतंगा) में देखते हैं, परन्तु जो दिव्य ज्योति को देखता है वही मानव है

वेदों में इसको ''भर्गो'' उपनिषदों में ''ज्योति'' गीता में ''विश्वरूप'' मानस में ''परम प्रकाश भक्ति'' बाइबल में ''दिव्य ज्योति'' और कुरान में ''नूर'' नाम से पुकारा गया है। आत्मिक उन्नति के लिए दिव्य ज्योति का दर्शन परमावश्यक है। ऐसा केवल सत्संग द्वारा ही हो सकता है, क्योंकि सत्संग का मानव जीवन पर अत्याधिक प्रभाव पड़ता है। कवि रहीम लिखते हैं–

कदली, सीप, भुजंगमुख, स्वाति एक गुण तीन।
जैसी संगति बैठिए तैसो ही फल दीन।।

स्वाति नक्षत्र के समय वर्षा की एक बूंद यदि केले के वृक्ष में चले जाने से मुश्क काफूर बन जाती है। वही बूँद सीप के मुँह में चले जाने से मोती बन जाती है और इस प्रकार सांप के खुले मुँह में चले जाने से विष बन जाती है। है। एक ही बूँद के विभिन्न स्थानों पर चले जाने से संगति या कुसंग के कारण कितना अंतर आ गया? इसलिए कहा जाता है कि जैसी व्यक्ति संगति करता है वस्तुतः वह वैसा ही बन जाता है। आत्मोन्नति के लिये सच्चे ज्ञान की प्राप्ति भी विद्वानों के सत्संग से ही होती है। इसलिये ''रामचरितमानस'' में तुलसीदास जी कहते हैं–

बिनु सत्संग विबेक न होई। रामकृपा बिनु सुलभ न सोई।।
सत्संगत मुद मंगलमूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला।।
सठ सुधरहिं संत संगति पाईं। पारस परस कुधात सुहाई।।
बिधि बस सुजन कुसंगत परहि। फनि मनि सभ निज गुन अनुसरहिं।।

बालकाण्ड 2.4.5

सत्संग के बिना विवेक नहीं होता। प्रभु कृपा के बिना सत्संग नहीं मिलता। यह आनन्द और कल्याण की जड़ है। इसकी प्राप्ति फल है और सब साधन फूल है। दुष्ट भी सत्संगति पाकर सुधर जाते हैं जैसे पारस के स्पर्श से लोहा सोना बन जाता है। परन्तु देवयोग से यदि कभी सज्जन कुसंगति में पड़ जाते हैं तो वे वहाँ भी साँप की मणि के समान अपने गुणों का अनुसरण ही करते हैं।

सत्संग का मानव जीवन पर कितना प्रभाव पड़ता है यह बात अमर शहीद आर्य मुसाफिर पंडित लेखराम जी के जीवन की एक घटना से प्रतीत होती है। जब पं. लेखराम जी ग्राम ग्राम जाकर आर्य समाज के वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार कर रहे थे तो एक दिन डाकू मुगला अपने अन्य साथी डाकुओं के साथ उनका प्रवचन सुनने के लिये भी आ गया। जब ग्राम के लोगों ने उन्हें पहचाना तो वे बहुत भयभीत हो गये और एक-एक करके वे सब व्याख्यान के मध्य से ही जाने लगे। यह देखकर पं. लेखराम जी बड़े हैरान हुये कि क्या कारण है कि श्रोतागण प्रवचन को छोड़कर भाग रहे हैं। इस प्रकार धीरे-धीरे सभी श्रोतागण चले गये और केवल मुगला और उसके साथी ही बैठे रहे अपने प्रवचन में पं. लेखराम जी कर्म के विषय में बता रहे थे।

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् —महाभारत

जो भी शुभ अथवा अशुभ कर्म आप ने किये हैं उनका फल आपको अवश्य ही भोगना पड़ेगा, कर्मफल से बचने का कोई मार्ग नहीं। दूसरे लोग न देखे, पुलिस न देखे, सरकार न देखे, परन्तु याद रखो कि एक आँख है जो आप को हर समय देख रही है। आपके हृदय के भीतर जो कुछ होता है उसे भी वह जानती है। उससे बचने का कोई मार्ग नहीं। प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्मोंका फल देता हैं

जब प्रवचन समाप्त हुआ तो मुगला ने पंडित लेख राम जी के पास जाकर कहा—"आप कौन हैं?" पं. लेखराम जी ने उत्तर दिया—मैं लेखराम हूँ।" डाकू ने कहा—मैं एकान्त में आपसे कुछ बातें पूछना चाहता हूँ। क्या आप से मिल सकता हूँ? पं. लेखराम जी से कहा—"अवश्य मिल सकते हो। मैं आर्य समाज में ठहरा हुआ हूँ, वहीं आ जाना।"

मुगला डाकू व उसके साथी रात को आर्य समाज में ही पहुँच गये। ग्रामवासियों ने समझा कि ये सब डाकू पं. लेखराम जी को लूटने आये हैं। परन्तु उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब मुगला डाकू ने दोनों हाथ जोड़कर पं. लेखराम जी से कहा—"आप तो कह रहे थे कि प्रत्येक कर्म का

फल अवश्य भोगना पड़ता है तो क्या यह ठीक है?'' पंडित लेखराम जी ने उत्तर दिया–''शत प्रतिशत ठीक है।''

फिर मुगला बोला–''क्या प्रत्येक कर्मफल भोगना पड़ेगा? क्या बचने का कोई उपाय नहीं? फिर पंडित लेखराम जी ने उत्तर दिया ''कोई नहीं'' मुगला बोला कई वर्ष से डाके डालता आ रहा हूँ?

पंडित लेखराम जी ने कहा–आज से छोड़ दो। कल आर्य समाज में आओ मैं तुम्हें यज्ञोपवीत दूँगा। इसके बाद धर्म मार्ग पर चलो।

मुगला और उसके साथी दूसरे दिन आर्य समाज में पहुँच गये और उन सब की सोई हुई आत्मा जाग उठी। वे सब डाकुओं से ऋषि भक्त बन गये। इसके अतिरिक्त मैं महान् वैज्ञानिक आईंस्टीन के जीवन की एक घटना प्रस्तुत करता हूँ।

अच्छी संगति और अच्छे विचार इंसान की प्रगति का द्वार खोल देते हैं। संगति इन्सान के जीवन में बहुत महत्त्व रखती है। अगर आप बुरी संगति में हो तो आप कितने भी बुद्धिमान क्यों न हों, लेकिन आप कभी भी जीवन में आगे नहीं बढ़ पाएंगे। वहीं अगर आप अच्छे लोगों की संगति में हैं तो आप को बड़ी-बड़ी समस्याएं भी छोटी लगने लगेंगी। ऐसी ही एक सच्ची घटना है अल्बर्ट आईंस्टीन की। अल्बर्ट आईंस्टीन महान् वैज्ञानिक थे जिन्होंने विज्ञान के क्षेत्र में बहुत बड़ा योगदान दिया है। एक बार आईंस्टीन रैलेटिविटी नामक फिजिक्स के टॉपिक पर रिसर्च कर रहे थे। इसी के चक्कर में वह बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में जाते थे और लोगों को लैक्चर देते थे। उनका ड्राइवर उनको बहुत बारीकि से देखा करता था।

एक दिन एक यूनिवर्सिटी में सैमीनार खत्म करके आईंस्टीन घर लौट रहे थे। अचानक उनके ड्राइवर ने कहा, ''सर, जो आप रैलेटिविटी पर यूनिवर्सिटी में लैक्चर देते हो, वह तो बहुत आसान काम है, यह तो मैं भी कर सकता हूँ।'' आईंस्टीन ने हँसते हुए कहा, ''ओ के, चिन्ता न करो, तुम्हें एक मौका जरूर दूँगा।''

फिर अगले दिन जब आईंस्टीन नई यूनिवर्सिटी में लैक्चर देने गए तो

उन्होंने ड्राइवर को अपने कपड़े पहना दिए और खुद ड्राइवर के कपड़े पहन लिए। फिर ड्राइवर से लैक्चर देने को कहा। उस बिना पढ़े-लिखे ड्राइवर ने बिना किसी दिक्कत के बड़े-बड़े प्रोफैसरों के सामने लैक्चर दिया। किसी को पता ही नहीं चला कि वह आईंस्टीन नहीं है।

लैक्चर खत्म होते ही उस यूनिवर्सिटी के एक प्रोफैसर ने आइंस्टीन बने ड्राइवर से कुछ सवाल पूछे तो इस पर ड्रॉइवर ने हंसकर कहा "बस इतना आसान सवाल, इसका जवाब तो मेरा ड्राइवर ही दे देगा।" अब ड्राइवर बन कर पीछे बैठे हुए आईंस्टीन आगे आए और सारे सवालों का जवाब दिया। बाद में आईंस्टीन ने सबको बताया कि लैक्चर देने वाले शख्स वह नहीं बल्कि उनका ड्राइवर है तो वहाँ बैठे सभी प्रोफैसरों ने दांतों तले उंगली दबा ली। किसी को यकीन नहीं हुआ कि जो रैलेटिविटी बड़े-बड़े प्रोफैसरों को समझ नहीं आती, इस ड्राइवर ने उसे कितनी आसानी से दूसरों को समझाया है। इसे कहते हैं संगति का असर। आईंस्टीन के साथ रहकर एक बिना पढ़ा ड्राइवर भी इतना बुद्धिमान हो गया।

5. संतोष – संतोष शब्द की व्युत्पत्ति सम्+तोष से हुई है जिसका अर्थ है समान रुचि। इसका भाव यह है कि प्रत्येक परिस्थिति में सुख व दुःख का ख़्याल न करके संतुष्ट रहना। यह मानव के आत्मिक विकास में अत्यधिक सहायक होता है। यह संसार का सर्वोत्तम सुख है। तभी तो "योग दर्शन" में महर्षि पतंजलि ने सत्य ही लिखा है–

संतोषादनुत्तमसुखलाभः –2.42

संतोष से सर्वोत्तम सुख मिलता है और इसकी बराबरी संसार का कोई भी सुख नहीं कर सकता। श्रीकृष्ण ने "गीता" में कहा है–

संतुष्टः सततयोगी –12.8

अर्थात् जो व्यक्ति सदा संतुष्ट रहता है वही योगी है। हम देखते हैं कि श्रीकृष्ण के जीवन में कितने ही कष्ट एवं दुःख आये परन्तु उन्होंने कभी एक क्षण के लिये संतोष का त्याग नहीं किया। इसी प्रकार श्रीराम और युधिष्ठिर वनवास में भी उतने ही संतुष्ट रहे जितने राजमहल में। वस्तुतः वे व्यक्ति

धन्य हैं जो कि संतोष संपदा से सम्पन्न हैं ।

इसके विषय में एक कहानी का विवरण देना चाहता हूँ कि एक महिला एक कुएँ से जल भर रही थी । परन्तु उसकी बाल्टी भर नहीं रही थी । अचानक ही उधर से एक संत गुजर रहे थे । उसने संत से कहा कि मैं इस कुएँ से बाल्टी में पानी भरने का प्रयास कर रही हूँ । परन्तु मेरी बाल्टी खाली की खाली है । इसके विपरीत मेरी सब सहेलियों की बाल्टियाँ भरी जा चुकी हैं ।

इस पर संत आचार्यचकित हो गये । संत ने उस महिला से कहा–''कृपया, बहन जी ! आप मुझे अपनी बाल्टी दिखाइये । जब संत ने बाल्टी देखी तो पता चला कि उसमें पेन्दा ही नहीं था वह बिन पेन्दे की बाल्टी थी फिर वह कैसे भरती ?

संत ने उस महिला से कहा, ''बहन ! अगर इसे सागर में भी डाल दें तो भी यह कभी नहीं भरेगी । क्योंकि इसमें पेन्दा ही नहीं है । अतः कृपया किसी लोहार से इसमें पेन्दा लगवायें फिर कुएँ तो क्या यह छप्पर में भी भर जायेगी ।'' उस महिला ने अपनी बाल्टी में पेन्दा लगवा लिया और फिर कुएँ में डालने से पहली बार में ही भर गई ।

इसी प्रकार यदि हम भी अपनी जीवन रूपी बाल्टी को सुख, शांति व आनंद से भरना चाहते हैं तो इसमें संतोष का पेन्दा लगा लीजिये । क्योंकि संतोष संसार का सर्वोत्तम सुख होता है ।

6. संयम – किसी भी कार्यसिद्धि के लिये सहनशीलता एवं विचारशीलता का होना परमावश्यक है । संयम से व्यक्ति के बड़े-बड़े कार्य सिद्ध हो जाते हैं और इससे आत्मविश्वास में विशेष सहायता एवं सहयोग मिलता है । यह एक प्रकार का जादू एवं चमत्कार होता है । इसके विषय में महर्षि दयानंद के जीवन की एक घटना का वर्णन इस प्रकार किया जाता है–

महर्षि दयानन्द फर्रूखाबाद में गंगा के किनारे पर ठहरे हुए थे और साथ ही थोड़ी दूर पर एक साधु भी एक झोंपड़ी में रहता था । वह हर रोज महर्षि दयानंद को अकारण ही गालियाँ देता था और महर्षि दयानंद सुनते और मुस्करा देते थे । कई बार उनके भक्तों ने कहा–''महाराज यदि आपकी आज्ञा

हो तो इस दुष्ट को सीधा कर दें ।'' महाराज सदा कहते—''नहीं, समय आने पर वह स्वयं ही सीधा हो जायेगा ।''

एक दिन किसी सज्जन ने फलों का एक बहुत बड़ा टोकरा महर्षि के पास भेजा उन्होंने अच्छे-अच्छे फल टोकरे में से निकालकर एक कपड़े में बाँध दिये । इसके बाद एक व्यक्ति को कहा—''ये फल उस साधु को दे आओ जो उस झोंपड़ी में रहता है और जो प्रतिदिन यहाँ आकर कृपा करता है ।''इस पर वह व्यक्ति अत्यधिक चकित हुआ और बोला—

''महाराज वह तो आपको गालियाँ देता है''

महर्षि दयानंद ने कहा—''हाँ उसी को दे आओ ।'' वह व्यक्ति फल लेकर उस साधु के पास गया और जाकर कहा—

''साधु बाबा, ये फल स्वामी दयानंद ने आपके लिये दिये हैं ।''

बस फिर क्या था साधु ने दयानंद का नाम सुनते ही उत्तर दिया—''अरे ! यह सुबह-सुबह किस का नाम तूने ले लिया ? आज पता नहीं भोजन भी मिलेगा या नहीं । चला जा यहाँ से । ये फल किसी दूसरे व्यक्ति के लिये भेजें होंगे । मेरे लिये नहीं क्योंकि मैं तो प्रतिदिन उसको गालियाँ देता हूँ ।

वह व्यक्ति उस साधु के पास से वापिस लौट आया और सारी राम कहानी महर्षि दयानन्द को सुना दी । परन्तु महर्षि दयानंद फिर बोले—''नहीं आप एक बार फिर उसके पास जाओ । उससे कहो कि आप प्रतिदिन जो अमृतवर्षा करते हो । उसमें आपकी काफी शक्ति व्यय हो जाती है । ये फल इसलिए भेजे हैं कि इन्हें खाकर आपकी शक्ति बनी रहे और आपकी अमृत वर्षा में किसी भी प्रकार की कमी न आ जाये ।

इस प्रकार उस व्यक्ति ने यह बात उस साधु को कह दी । साधु ने जब यह सुना तो मानों सैंकड़ों घड़े पानी उसके ऊपर पड़ गया । इसके उपरांत अपनी कुटिया से दौड़ता हुआ महर्षि दयानंद के पास पहुँचा और जाकर उनके चरणों में गिर कर बोला ।

''महाराज ! मुझे क्षमा करो ! मैंने आपको मनुष्य समझा था, परन्तु आप तो देवता हैं ।''

यह है संयम का जादू ! जिसके जीवन में संयम उत्पन्न हो जाता है, उसके जीवन में एक अद्‌भुत मिठास, एक दिव्य संतोष एवं विचित्र प्रकाश आ जाता है और उसकी आत्मोन्नति स्वयं हो जाती है । इसी कारण महात्मा कबीर ने सत्य ही कहा है–

सीलवंत सबतें बड़ा, सर्वरतन की खान ।
तीन लोक की सम्पदा, रही सील में आन ।।

7. सेवा – सेवा निम्नलिखित चार प्रकार की होती है–

(1) सकाम सेवा (Duty) – अपनी स्वार्थपूर्ति के निमित्त ईमानदारी से जो सेवा की जाती है वही सकाम सेवा है । जैसे कोई कर्मचारी किसी कार्यालय में काम करता है और कोई दुकानदार अपनी दुकान चलाता है आदि । ये सब सेवायें केवल अपने ही सुख व स्वार्थ के लिये की जाती है । ऐसा सकाम सेवा स्वार्थ सेवा को (Duty) कहा जाता है । इसके विषय में स्वामी विवेकानंद जी ने कहा है–

Every duty is holy and devotion to duty is the highest form of worship of God. Vol V. P-340

प्रत्येक कर्त्तव्य श्रेष्ठ होता है और इसके प्रति निष्ठा एवं श्रद्धा ही प्रभु की सर्वोत्कृष्ट पूजा है ।

(2) यश सेवा – जब व्यक्ति कोई सेवा इस सेवा भाव से करता है कि इससे संसार में मेरा यश फैले, तो वह यश सेवा कहलाता है । जब तक वह अपने कानों से अपना यश सुनता रहता है तब तक सेवा के लिए उसका उत्साह भी बढ़ा रहता है । परन्तु उसकी तृप्ति कभी नहीं होती । यही कारण है कि जब अपने यश और कीर्ति के शब्द उसके कानों में आने बंद हो जाते हैं तब वह बेचैन हो जाता है और अन्त में निरुस्साह होकर सेवा करना छोड़ बैठता है । उस पर भी अपने सेव्य (जिसकी सेवा की जाए) के किसी गुण का कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।

(3) लोकाचार सेवा – लोकाचार सेवा यह है जो सेवा व्यक्ति अपनी इच्छा से तो करना नहीं चाहता परन्तु लोगों के दिखाने के लिए केवल इस विचार से अपने मन पर पत्थर रख कर अनिच्छापूर्वक करता है कि न करने से निन्दा होगी। यह सेवा महा दुःखदायी होती है। सेवा करते हुए भी उनके मन में क्लेश की अग्नि जलती रहती है और तदुपरान्त भी वह प्रसन्न नहीं हो सकते, उन्हें उसका खेद ही रहता है तथा धनादि जिससे यह सेवा की जाये उसकी हानि तो स्पष्ट ही है।

(4) निष्काम सेवा –

इबादत है दुःखियों की इमदाद करना।
जो नाशाद है उनका दिल शाद करना।।
ख़ुदा की नमाज़ और पूजा यही है।
जो बरबाद है उनको आबाद करना है।।

निष्काम सेवा वह सेवा है जो बिना किसी स्वार्थ से दूसरे व्यक्ति के कल्याण के लिये की जाती है। वस्तुतः सेवा वही होती है जो सहज स्वभाव से की जाती है। सेवा एक ऐसी पवित्र साधना है जो बेची और खरीदी नहीं जा सकती। निष्काम सेवा करने वाले बिरले ही व्यक्ति होते हैं, जो तन, मन एवं धन से मानवकल्याण के लिये अपना सर्वस्व न्योछावर कर देते हैं। उनका विचार होता है कि अपाहिज, रोगी, दीन और असहाय की सेवा कीजिए जिससे व्यक्ति का आत्मविकास स्वतः ही होता चला जाता है। यही आत्मसेवा ही आत्मा का भोजन है। इसी को सच्ची सेवा भी कहा जाता है। एक उर्दू शायर ने कितना सुन्दर लिखा है–

संसार में नर जन्म लिया करते हैं।
पर वे जन्म यूं ही व्यर्थ किया करते हैं।
पर जीना उसका है जो पर हेतु जिया।
यो तो जमाने में सब लोग जिया करते हैं।

अतः उन्हें पिलाइये जो प्यासे हैं। उन्हें बसाइए जो उजड़े हैं। उन्हें हँसाइये जो रो रहे हैं। उन्हें समझाइए जो नासमझ हैं। उन्हें पढ़ाइए जो

अनपढ़ हैं । ग़रीब की सेवा कीजिए । असहाय की सेवा कीजिए । दीन की सेवा कीजिए और रोगी की सेवा कीजिए । यही आत्मसेवा है, यही आत्मा का भोजन है और यही प्रभुसेवा है स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है–

This life is short, the vanities of the world are transient, but they only live who live for others the rest are more dead than alive. Vol. III P. 363

मानव जीवन क्षणभंगुर है । संसार के सारे अहं एवं वैभव भी क्षणभंगुर है । परन्तु वही व्यक्ति जीता है जो कि दूसरे व्यक्तियों के लिये जीता है और शेष व्यक्ति तो मुर्दे से भी बुरे हैं । स्वामी विद्यानन्द ''विदेह'' ने भी कितना सुन्दर लिखा है–

जीवन उन्हीं का धन्य है, जीते हैं जो सब के लिये ।
धिक्कार हैं उनके लिये, जीते हैं जो अपने लिए ।।
जन्म होता है, सुजन का विश्व के उद्धार को ।
विश्व सेवा, विश्व मंगल, विश्व के उपकार को ।।

8. योग – योग भी आत्मिक उन्नति के लिये परमावश्यक है । योग की परिभाषा करते हुए महर्षि पतंजलि ''योगदर्शन'' में कहते हैं–

योगश्चित्तवृत्ति निरोधः –1.2

अर्थात् चित्त की वृत्तियों को रोकने का नाम योग है ।

हम अपने बाह्य व्यवहार की सिद्धि के लिये ज्ञान और कर्म इन्द्रियों को साधन बनाते हैं इसी प्रकार हमारे आंतरिक व्यवहार की सिद्धि के लिये भी कुछ साधन है जिनको अंतःकरण चतुष्टय अर्थात् मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार कहा जाता हैं किसी व्यक्ति की जब शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक दशा अस्त-व्यस्त होती है तभी वह दुःखी होता है और योग साधना नहीं कर सकता । गीता में सत्य ही कहा गया है–

योगः कर्मसु कौशलं –2.48

किसी भी कार्य में कुशलता और निपुणता की प्राप्ति ही योग है ।

जब व्यक्ति किसी कार्य को कुशलता से करता है तो उसमें तल्लीन हो

जाता है । उसकी ज्ञान और कर्मेन्द्रियाँ तथा अन्तःकरण चतुष्टय (मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार) उसमें पूर्णतः युक्त हो जाते हैं । इससे त्याग की भावना आती है और मानव त्याग से सुखमय और शांतमय जीवन व्यतीत कर सकता है । आनंद तो हर जगह है परन्तु उसे अनुभव कर सके ऐसा हृदय सबके पास नहीं है । जब आत्मा सत् रज् एवं तम् गुणों को पार कर लेता है तभी उसको सुख-दुःख के चक्र से छुटकारा मिलकर दिव्यानंद की अनुभूति होती है । गीता में सत्य ही कहा गया है–

गुणानेतानीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान् ।
जन्ममृत्यु जरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते ।। –14.20

बदन का है तीनों गुणों पर मदार, मकीन-ए बदन गर करे उनको पार ।
वो चखता है अमृत वो पाता है सुख, न जीना, न मरना, न पीरी न दुःख ।।

देह के उत्पन्न करने वाले इन तीनों गुणों को लांघकर देही जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा और दुःखों से विमुक्त हुआ अमृत भोगता है ।

इसके उपरान्त जब मानव इन तीनों गुणों से ऊपर उठ जाता है तो उसे गुणातीत के नाम से पुकारा जाता है । गीता में कहा गया है–

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः ।
सर्वारम्भ परित्यागी गुणातीतः स उच्चते ।। –14.25

न जिल्लत की परवाह न इ़ज़्ज़त की भूख, करे दोस्त दुश्मन से यकसाँ सलूक ।
ग़रज़ त्याग दे मुझ पे सब कारोबार, समझ लो गुणों से होता है पार ।।

जो व्यक्ति मान-सम्मान में समान भाव रहता है, जो शत्रु व मित्र के साथ समान व्यवहार करता है और जिसने सारे भौतिक कार्यों का परित्याग कर दिया है । वही व्यक्ति गुणातीत कहलाता है । आत्मिकोन्नति के सार को किसी हिन्दी कवि ने इस प्रकार सत्य व्यक्त किया है ।

सेवा, संयम, साधना, सत्संग और स्वाध्याय ।
दुःख में सुख को पायेगा, जो इनको अपनायेगा ।।

सामाजिक कर्त्तव्य

मानव एक सामाजिक प्राणी है क्योंकि समाज में ही उसका पालन

पोषण होता है। उसे सब प्रकार के सुख-सुविधा समाज से ही मिलती है। अतः समाज के बिना व्यक्ति न ही जीवित रह सकता है और न ही प्रगति कर सकता है। इसलिये हम में प्रत्येक का यह कर्त्तव्य है कि वह समाज की प्रगति के लिये भी कुछ कार्य करे। एक उर्दू शायर ने कितना सुन्दर लिखा है–

यही है इबादत, यही है दीनों ईमान।
कि दुनियाँ में काम आये इन्सान के इन्सान।।

आयुर्वेद में लिखा है कि मानव के सारे कार्य प्रयत्न और चिन्तन सुख के लिये होते हैं। धर्म का नाम सुख है और पाप का नाम दुःख है। अतः सुखी रहने के लिये व्यक्ति को धर्मात्मा होना चाहिये। अब प्रश्न उठता है कि धर्मात्मा कौन है?

मनु महाराज ने 'मनुस्मृति' में धर्म के दस लक्षणों का इस प्रकार उल्लेख किया है।

धृतिः, क्षमा, दमोऽस्तेयं, शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो, दशकं धर्म लक्षणम्।। –6.92

धैर्य, क्षमा, मन का वशीकरण, चोरी, त्याग, पवित्रता, इन्द्रियों का वशीकरण, पवित्र, बुद्धि, विद्या, सत्य, क्रोध का त्याग यही दस धर्म के लक्षण हैं। इन दस गुणों को धारण करके व्यक्ति धर्मात्मा बनता है और उसका आत्मिक और सामाजिक विकास होता है।

9. आस्तिक बुद्धि

एक उर्दूशायर मोमिन प्रभु की सर्वव्यापकता पर प्रकाश डालते हुए फरमाते हैं–

तुम मेरे पास होते हो गोया । (मानो)
जब कोई दूसरा नहीं होता । ।

इसी प्रकार एक हिन्दी कवि के शब्दों में–

मेरा नाथ तू है, मेरा नाथ तू है । नहीं मैं अकेला मेरा साथ तू है । ।
मेरा इष्ट तू है, मैं तेरा पुजारी । तेरा खेल मैं हूँ, तू मेरा खिलाड़ी । ।

यह अटल सत्य है कि इस संसार को बनाने वाली कोई न कोई शक्ति अवश्य है । इसलिये वेदों और उपनिषदों में ईश्वर को ''सत्यम्'' नाम से पुकारा गया है । ''सत्यम्'' शब्द की व्युत्पत्ति स+त+यम शब्दों से हुई है । 'स' का अर्थ है जीव 'त' का अर्थ है ब्रह्माण्ड और यम का अर्थ है–''शासक'' । अतः सत्यम् शब्द का अर्थ है जो जीव एवं ब्रह्माण्ड पर शासन करने वाला हो । उसे ईश्वर कहते हैं । संसार के विभिन्न 40 वैज्ञानिकों ने "The Evidence of God in Expanding Universe" नामक पुस्तक में प्रभुसत्ता को स्वीकार किया है । आस्तिक बुद्धि से व्यक्ति में कभी भी अभिमान की भावना नहीं आती । इससे पता चलता है कि हम सर्वेसर्वा नहीं हैं । महर्षि दयानन्द ने भी ''सत्यार्थप्रकाश'' में कहा है–मनुष्य स्वतंत्र कर्ता अर्थात् मानव कर्म करने में स्वतंत्र है परन्तु ईश्वरीय व्यवस्था में कर्मफल भोगने में परतंत्र है । एक बार एक राजा ने अपने मंत्री से पूछा–प्रभु कहाँ रहते हैं, किधर देखते हैं और क्या करते हैं ।

मंत्री को इसका कोई उत्तर न सूझा तो उन्होंने कहा–''महाराज ! मुझे एक सप्ताह का समय दीजिए तब मैं आपके प्रश्नों का उत्तर दूँगा ।

एक सप्ताह का समय मिल गया । मंत्री जी उत्तर सोच रहे थे किन्तु उन्हें कुछ सूझता नहीं था । मंत्री जी के यहाँ एक नौकर भी रहता था । उसका नाम था हलका । मंत्री जी को चिन्तित देखकर एक दिन हलके ने पूछा–''स्वामी ! आपकी चिन्ता का क्या कारण है ? मंत्री जी ने नौकर को कारण बतलाया और

वह बोला राजा के प्रश्नों का मैं उत्तर दे सकता हूँ। अवधि की समाप्ति पर हलका को दरबार में उपस्थित कर मंत्री ने कहा–''राजन ! आपके प्रश्न इतने सरल हैं कि उनका उत्तर मेरा नौकर दे सकता है।''

महाराज ने नौकर से पूछा–''बताओ, प्रभु कहाँ रहते हैं?'' वह बोला–''राजन्! पहले अतिथि का सत्कार किया जाता है फिर उससे पूछा जाता है। आप ने तो बिना आतिथ्य के ही प्रश्न पूछना आरम्भ कर दिया।'' महाराज कुछ लज्जित हुए और अतिथि के लिये दूध लाने का आदेश दिया। हलके ने दूध का कटोरा बायें हाथ में पकड़ा और दायें हाथ की ऊंगली से हिलाकर तथा बार-बार उंगली को दूध से बाहर निकालकर देखता रहा।

महाराज ने पूछा–''यह क्या कर रहे हो? वह बोला सुना था कि दूध में मक्खन होता है, मैं वही ढूँढ रहा हूँ। राजा ने कहा–''दूध में मक्खन होता है उसकी प्रत्येक बूंद में एक-एक कण मक्खन है। परन्तु वह ऐसे दिखाई नहीं देता।'' पहले दूध को गर्म करना पड़ता है फिर उसमें जामन लगाते हैं तब उसका दहीं जमता और दही को मथने से ही मक्खन प्राप्त होता है।

नौकर ने कहा, महाराज, यही तो आपके प्रश्न का उत्तर है। प्रभु कण-कण में है। उसे पाने के लिये यम नियमों का अनुष्ठान करना पड़ता है। ध्यान का जामन लगाना पड़ता है। फिर ओ३म् की मथनी से उसको मथना पड़ता है तब परमात्मा रूपी मक्खन सर्वत्र दिखाई पड़ता है। अभ्यास से ही आत्मा में निवास करने वाले परमात्मा का साक्षात्कार सम्भव है।''

महाराज बोले–''बहुत ठीक ! अब बताओ कि प्रभु किधर देखता है।

हलका ने एक मोमबत्ती जलाई और पूछा, ''राजन्! यह मोमबत्ती किधर देखती है?''

राजा ने कहा–''यह चारों तरफ देखती है।''

नौकर ने कहा– इसी प्रकार प्रभु सब व्यक्तियों के कर्मों को देखते हैं।

महाराज ने कहा –''प्रभु क्या करते हैं?''

नौकर बोला–''राजन् ! यह बताइये कि आप गुरु बनकर पूछ रहे हैं या शिष्य बनकर।

राजा बोले–मैं शिष्य बनकर ही पूछता हूँ।

हलका ने कहा–''वाह महाराज आप बहुत अच्छे शिष्य हैं। गुरु तो

जमीन पर खड़ा है और आप गद्दी पर बैठे हैं। कमाल का है यह आपका शिष्टाचार।

महाराज बहुत लज्जित हुये। वह गद्दी से उतरे और हलके को उस पर बैठा दिया और फिर पूछा–'अच्छा अब बताइये कि प्रभु क्या करते हैं? हलके ने उत्तर दिया–आप देख नहीं रहे कि प्रभु ने पलभर में राजा को रंक और रंक को राजा बना दिया।

अतः ईश्वर अनुभव का विषय है। वह देखने का विषय नहीं, जैसे हम मन और वायु को नहीं देख सकते और अनुभव ही कर सकते हैं। किसी उर्दू शायर ने ठीक ही कहा है–

तीरखाने की तमन्ना है तो जिगर पैदा कर।
सरफरोशी की तमन्ना है तो सर पैदा कर।।
कौन कहता है कि ख़ुदा मौजूद नहीं?
दीदार की तमन्ना है तो नज़र पैदा कर।।

इस कारण हमें प्रभु पूजन कामनारहित होकर कर्मों के द्वारा ही करना चाहिये न कि धूप और दीप से। एक उर्दू शायर ने कितना सुन्दर लिखा है?

जन्नत के लिये जो इबादत करते हैं,
वो इबादत नहीं तिजारत करते हैं।
हमें जन्नत मिले या दोजख,
हम तो इबादत के लिये इबादत करते हैं।

संसार का भाग्यशाली व्यक्ति वही है जो आत्मसमर्पण करके प्रभु का निष्काम भक्त बन जाता है। एक कवि ने कितना सुन्दर लिखा है?

इनसान वही बड़भागी, जिसे प्रभु से लगन लागी।

वीर्य के अभाव से शारीरिक विकास, सदाचार के अभाव से मानसिक विकास, विद्या के अभाव से बौद्धिक विकास और भक्ति के अभाव से आत्मिक विकास रुक जाता है।

10. गुणग्राही बनना

सुखी और संतोषी जीवन व्यतीत करने के लिये हमें परदोष दर्शन न करके गुणग्राही होना चाहिये। संसार के प्रत्येक व्यक्ति और उसके द्वारा बनाई गई प्रत्येक वस्तु अपूर्ण है। अतः हमें प्रत्येक प्राणी एवं वस्तु में गुण देखना चाहिये न कि दोष। यदि व्यक्ति की ऐसी प्रकृति बन जायेगी तो वह पशु, पक्षियों और अन्य प्राकृतिक वस्तुओं से भी गुण ग्रहण करके गुणी बन जायेगा। इसके विषय में चाणक्य ने अपनी ''चाणक्य नीति'' में लिखा है–

सिंहादेकं बकादेकं शिक्षेच्चतवारि कुकुटात्।
वायसात्पंच शिक्षेच्च षट् शुनस्त्रीणि गर्दभात्।।

व्यक्ति को शेर और बगुले से एक-एक, गधे से तीन, मुर्गे से चार कौए से पाँच और कुत्ते से छः ऐसे कुल 20 गुण पशु पक्षियों से सीखने चाहिये।

प्रत्येक व्यक्ति को अच्छे गुण सीखने के लिये सदा तैयार रहना चाहिये ताकि उसके स्वभाव एवं आचरण में अच्छे गुणों की वृद्धि होती रहे। यदि व्यक्ति को अच्छे गुण सीखने की लगन हो तो वह कहीं से भी अच्छे गुण सीख सकता है। उपर्युक्त श्लोक में पशु-पक्षियों से सद्गुण सीखने की सलाह दी गई है और इसके विवेचन इस प्रकार किया जाता है।

1. शेर – शेर से एक गुण स्वावलम्बी होने का सीखा जा सकता है। शेर छोटा या बड़ा कोई भी काम अकेला अपने बलबूते पर ही करता है और कार्य पूरा करके ही छोड़ता है।

2. बगुला – बगुला एकाग्रचित और स्थिर होकर धैर्यपूर्वक मछली की राह देखता है। धैर्य और एकाग्रता रखना बगुले से सीखने चाहिये।

3. गधा – गधा काम करने में सदा तत्पर रहता है। सर्दी गर्मी को समान रूप से सहता है और सदा मस्त रहता है। ये तीन गुण गधे से सीखने चाहिये।

4. मुर्गा – निम्नलिखित 4 गुण मुर्गे से सीखने चाहियें–

(1) प्रातः उचित समय पर सूर्योदय से पूर्व उठकर बांग देना।

(2) शत्रु का डट कर सामना करना ।

(3) मिल बाँट कर खाना ।

(4) कचड़े-कूड़े में से भी अपना भक्ष्य खोज लेना ।

5. कौआ – अधोलिखित 5 गुण कौए से सीखने चाहिये –

(1) एकांत में छिपकर भोग करना ।

(2) धैर्यवान् होना ।

(3) सदा सतर्क रहना ।

(4) किसी का विश्वास न करना ।

(5) दूर से अपना लक्ष्य पहचान कर तुरन्त झपट पड़ना ।

6. कुत्ता – ये छः गुण कुत्ते से सीखने चाहिये ।

(1) कुत्ता कितना भूखा हो थोड़ा खाकर भी संतुष्ट हो जाता है अर्थात् संतोषी स्वभाव का होता है ।

(2) गहरी नींद सोया हो तो भी जरा सा खटका सुनते ही जाग जाता है ।

(3) अपने मालिक को बहुत चाहता है अर्थात् स्वामी भक्त होता है ।

(4) गंध सूंघ कर कभी भूलता नहीं ।

(5) समय पड़ने पर बहादुरी दिखाता है ।

(6) बिना झोली के फ़कीर की भाँति भिक्षा मांगने घर-घर जाता है ।

इसके विषय में एक कवि ने कितना सुन्दर लिखा है–

फूलों से तुम हँसना सीखो, भँवरों से तुम गाना ।
सूरज की किरणों से सीखो, जगना और जगाना ।।

धूँये से तुम प्यारे सीखो, ऊँची मंजिल पाना ।
पेड़ों से तुम प्यारे सीखो, फल पाकर झुक जाना ।।
मेंहदी के पत्तों से सीखो, पिस पिसकर रंग चढ़ाना ।
पतझड़ के पेड़ों से सीखो, दुःख में धीर बंधाना ।।
सुई और धागे से सीखो, बिछडे गले लगाना ।
मुर्गे की बोली से सीखो, प्रातः प्रभु गुण गाना ।।
पानी की मछली से सीखो, धर्म हेतु मर जाना ।।

यह संसार गुण दोषों से परिपूर्ण है । सुखी जीवन व्यतीत करने के लिये व्यक्ति को अन्य व्यक्तियों के गुण और अपने दोष देखने चाहियें ।

इसके विषय में महाभारत की एक अत्यंत शिक्षाप्रद एवं रोचक घटना का उल्लेख है । एक बार गुरु द्रोणाचार्य कौरवों और पांडवों को अच्छाई एवं बुराई के विषय में पाठ पढ़ा रहे थे । पाठ दो-तीन दिन तक चलता रहा । इसके उपरांत गुरु जी ने कौरवों और पांडवों से कहा कि अच्छाई और बुराई को भली भाँति जान लो कल तुम्हारी परीक्षा होगी । अगले दिन गुरु जी ने कौरवों में दुर्योधन और पाण्डवों में से युधिष्ठिर को बड़ा होने के कारण परीक्षा के लिये चुना । उन्होंने दोनों को दो-दो काग़ज़ देकर कहा कि पास के नगरों में जाओ और सप्ताह भर में बुरे और अच्छे लोगों के नाम लिखकर लाओ ।

दोनों परीक्षा के लिये निकल पड़े और एक सप्ताह पश्चात् बाद खाली काग़ज़ लेकर लौट आये । गुरुजी ने डांट कर पूछा–क्या कार्य पूरा नहीं किया?'' दोनों ने उत्तर दिया कि ''कार्य तो पूरा हो गया, लेकिन लिखने की आवश्यकता नहीं पड़ी ।'' गुरुजी ने उत्तर जानना चाहा ।

पहले गुरुजी ने दुर्योधन से पूछा–''दुर्योधन क्या आस-पास कोई भी अच्छा या बुरा व्यक्ति नहीं मिला?'' दुर्योधन ने कहा– ''गुरुजी जब मैं बुरे व्यक्ति ढूंढने लगा तो हर व्यक्ति बुराइयों से भरा था, बुरे ही बुरे लोग थे । अतः किसी का नाम नहीं लिखा । सोचा जब सभी बुरे हैं तो काग़ज़ क्यों खराब करूँ । इसी प्रकार जब अच्छे लोग ढूंढने गया तो एक व्यक्ति के अतिरिक्त कोई भी अच्छा व्यक्ति नहीं मिला । वह अच्छा व्यक्ति मैं स्वयं हूँ

गुरुजी ।'' दुर्योधन ने गर्व से उत्तर दिया । क्योंकि मैं आपके पास ही आ रहा था अतः अपना नाम लिखना ठीक न समझा ।''

अब युधिष्ठिर की बारी थी । गुरु जी बोले, ''युधिष्ठिर तुम भी कारण सहित उत्तर दो कि तुम्हारे काग़ज़ खाली क्यों रह गये ।'' युधिष्ठिर ने नम्रता से कहा—''गुरु जी जब मैं आस-पास अच्छे व्यक्ति ढूंढने गया तो हर व्यक्ति अच्छा था, सभी में कुछ न कुछ अच्छाई जरूर थी । अतः किसी का नाम नहीं लिखा, सभी लोग अच्छे हैं । इसके बाद जब मैं बुरे लोगों को ढूंढने निकला तो सबसे बुरा मैंने स्वयं को पाया और कोई व्यक्ति बुरा मिला ही नहीं । परन्तु सोचा गुरु जी के पास ही जा रहा हूँ । वहा स्वयं उपस्थित हो जाऊँगा ।'' इतना कहकर युधिष्ठिर सिर झुका कर खड़ा हो गया ।

गुरु जी दोनों के विचार सुनकर आश्चर्य में पड़ गये । इसके बाद उन्होंने सभी को बिठाकर पुनः बताया कि वस्तुतः अच्छाई बुराई प्रत्येक व्यक्ति में होती है । परन्तु हमारा कर्त्तव्य है कि हम व्यक्ति की अच्छाइयां ही देखें और उन्हें ग्रहण करें । इसके विपरीत अपनी बुराइयों को जानकर शीघ्र दूर करना चाहियें । यही जीवन में सुखी रहने का उपाय है । कबीर जी के वचन श्रीगुरुग्रंथसाहिब में इस प्रकार हैं—

बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोई ।
जब मन खोजा आपना, मुझसा बुरा न कोई ।।

कुछ विद्वानों का विचार है कि पहले जीवन का उद्देश्य निश्चित करो तभी सुख व दुःख का अर्थ मालूम होगा । जीवन का अर्थ क्या आप केवल भोगोविलास समझते हो अथवा प्रभुसमर्पण या परोपकार । ऐसा करने से ही सुख व दुःख निश्चित् होगा । व्यक्ति शर्त्तयुक्त (Conditional) है न आध्यात्मवादी (Spiritual) । इसी कारण वह दुःखी है । पिता-पुत्र और पति-पत्नी के संबंध शर्त्तयुक्त हैं न कि आध्यात्मवादी । शर्त्तयुक्त होने के अर्थ है कि हम अपनी बनाई हुई दुनियाँ में जीते हैं जैसे घृणा शर्त्तयुक्त है और प्रेम आध्यात्मवादी है ।

मानव शरीर की आधारभूत आवश्यकतायें—रोटी, कपड़ा और मकान आदि व्यक्ति को कर्म करने के लिये प्रेरित करती हैं परन्तु ये दुःख नहीं है ।

यदि व्यक्ति इनकी पूर्ति के लिये काम नहीं करेगा तो उसका जीवन आलस्य के कारण नरक बन जायेगा। बड़े दुःख जैसे किसी प्रियजन की अचानक मृत्यु, दुर्घटना, किसी कीमती वस्तु का चोरी होना, कोई असाध्य रोग लग जाना आदि व्यक्ति को पाप से बचाने के लिये होते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ दुःख सुख की अनुभूति के लिये होते हैं।

अतः हम देखते हैं कि संसार में सुख व दुःख का अनुपात 99 : 1 का है। इस कारण महर्षि दयानंद ने अपने अमर ग्रंथ ''सत्यार्थप्रकाश'' में लिखा है कि सुख-दुःख से लाखों गुणा अधिक है। दुःख संसार में आटे में नमक के समान है। यदि आप इन नाममात्र के दुःखों को समाप्त करना चाहते हों तो शर्त्तयुक्त से आध्यात्मिक व्यक्ति बन कर दिखाना होगा। किसी उर्दू शायर ने लिखा है–

पूरे मर्द वे हैं जो हर हाल में ख़ुश हैं।

इसी प्रकार उर्दू शायर मेहर के शब्दों में–

ज़रदार (अमीर) को कहते हैं कि ज़र (धन) में मस्त।
बेज़र (ग़रीब) को कहते हैं कि है खाल में मस्त।।
हे मेहर! मस्ती है फ़कत (केवल) कहने की।
है मस्त वही जो हर हाल में है मस्त।।

परन्तु संसार में रहते हुये ऐसा करना असम्भव है। वस्तुतः आध्यात्मिक व्यक्ति होना आदर्शवाद की पराकाष्ठा हैं अपने जीवन से व्यक्ति संतुष्ट तो हो सकता है, परन्तु पूर्णतया आध्यात्मवाद कभी नहीं होना चाहिये क्योंकि यदि मानवजीवन से सर्वदा दुःख भाग गये तो बड़ा अनर्थ होगा जीवन में सुख-दुःख का होना ही परमावश्यक है। तभी जीवन का मजा है। कविवर पंत ने ''गुंजन'' में ठीक ही लिखा है–

मैं न चाहता चिर सुख, मैं न चाहता चिर दुःख।
सुख-दुःख के मधुर मिलन से फिर जीवन हो परिपूर्ण।।

11. उत्तम स्वभाव

प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना स्वभाव होता है। संसार में किसी भी दो व्यक्तियों का स्वभाव, आकृति, प्रकृति एवं परिस्थिति पूर्णतः नहीं मिल सकती। यहाँ तक कि दो जुड़वां भाइयों में भी अंतर होता है। इसलिये सत्यपाल 'पथिक' लिखते हैं–

दुनियाँ रंग बिरंगी बाबा दुनियाँ रंग बिरंगी।
अन्दर इसमें कूड़ा-कर्कट, बाहर से चमकीली।।

वस्तुतः व्यक्ति का स्वभाव ही उसके सुख-दुःख का मुख्य कारण होता है। मानव के स्वभाव का निर्माण पूर्वजन्म के संस्कार, वंशानुक्रम, संगति, अन्न, दृश्य, जलवायु, पुरुषार्थ और भाग्य से होता है। अब प्रश्न उठता है कि उत्तम स्वभाव के व्यक्ति के मुख्य गुण क्या हैं? उत्तम स्वभाव का व्यक्ति अच्छे गुणों की खान, उदारवादी, संतोषी, शान्तिप्रिय, विनम्र, प्रसन्न, पवित्र आदि सत्गुणों से विभूषित होता है। उत्तम स्वभाव के व्यक्ति के मुख्य गुणों का उल्लेख अधोलिखित पंक्तियों में किया जाता है।

वस्तुतः संतोष संसार का सर्वोत्तम सुख है जिसकी उपलब्धि अपने से नीचे वाले व्यक्तियों को देखकर हो सकती है। अंग्रेज़ी भाषा में कहावत है– Contentment is happiness संतोष परम सुख है। इसी प्रकार किसी अंग्रेजी कवि ने लिखा है–

My crown is in my heart, not on my head.
Not decked with diamonds and Indian stones,
Not to be seen, my crown is called content,
A Crown it is that seldom things enjoy.

संतोष से जो अनंत सुख मिलता है उसकी बराबरी दूसरा कोई सांसारिक सुख नहीं कर सकता। वही सर्वोत्तम सुख है। महात्मा उननाम के जीवन की एक घटना उल्लेखनीय है कि उन्होंने 5 वर्ष में एक ग्रंथ लिखा। प्रातः इस ग्रंथ को प्रेस में छपने के लिये भेजने वाले ही थे कि अचानक रात को

उनकी झोंपड़ी में आग लग गई और उस ग्रंथ की पांडुलिपि जलकर राख हो गई। ऐसा होने पर लेशमात्र असंतुलित न होते हुये, उन्होंने बड़े विश्वास के साथ लेखनी ली और पुनः ग्रंथ की रचना कर डाली। अतः वे व्यक्ति धन्य हैं जो संतोषसम्पदा से सम्पन्न हैं। मुनिश्री तरुण सागर लिखते हैं–

बड़ा आदमी वह नहीं जिसके पास कई नौकर, गाड़ी और बंगले हैं बल्कि बड़ा आदमी वह है, जो किसी का कर्ज़दार नहीं है, जो जितना कमाता है उसी से संतुष्ट रहता है। बड़ा आदमी वह है, जिसकी सेहत अच्छी है और जो अपना काम खुद कर लेता है। बड़ा आदमी वह है, जो किसी जरूरतमंद की सेवा को तैयार रहता है, और किसी ग़रीब का हक नहीं छीनता। बड़ा आदमी वह है, जो कठिन परिस्थिति में भी मुस्कराता है और जिसे कोई उदासी कभी उदास नहीं कर पाती। बड़ा आदमी वह है, जिसे तकिए पर सिर रखते ही नींद आ जाती है और सुबह के लिये किसी अलार्म की जरूरत नहीं पड़ती।

–कड़वे प्रवचन (भाग-1) पृ. 80

2. शान्ति –शान्ति का सम्बन्ध न तो धन से है न पद प्रतिष्ठा से है न वैभव और परिवार से है। वस्तुतः इसका सम्बन्ध विवेक और त्याग से है। एक राज कुमार के जीवन की घटना का उल्लेख इस प्रकार किया जाता है। एक बार एक राजकुमार विश्व भ्रमण के लिये निकला और उसके प्रत्येक मित्र ने अमेरिका से कुछ न कुछ वस्तु लाने के लिये निवेदन किया। परन्तु उसके निर्मल मित्र ने कहा–

मेरे लिये कहीं से थोड़ी सी शांति लाना।

राजकुमार जहाँ भी गया वहीं उसने शांति की खोज की परन्तु उसे किसी भी मूल्य पर कहीं भी शांति नहीं मिली।

अचानक राजकुमार की भेंट एक शांतात्मा से हो गई राजकुमार ने उससे प्रार्थना की–क्या आप मुझे मेरे मित्र के लिये थोड़ी सी शांति दे सकते हैं। शांतात्मा ने राजकुमार को उत्तर दिया मैं आपके मित्र के लिये थोड़ी सी नहीं, अनन्त शांति दूंगा।

इसके शान्तात्मा ने एक-एक काग़ज़ पर कुछ शब्द लिखकर और एक लिफाफे में बंद करके और लिफाफे पर अनंत शांति लिखकर राजकुमार को लिफाफा दे दिया और साथ यही आदेश दिया इसको अपने मित्र को दे देना और राजकुमार जब स्वदेश लौटा तो उसने वही लिफाफा अपने मित्र को दे दिया। जब राजकुमार के मित्र ने लिफाफा खोलकर उसमें से कागज निकालकर पढ़ा तो उसे वस्तुतः अनंत शांति प्राप्त हो गई और उसने राजकुमार को कहा–''धन्यवाद, राजकुमार! आपकी कृपा से मुझे अनंत शांति प्राप्त हो गई।''

इस पर राजकुमार ने पूछा–''इतने छोटे लिफाफे में अनंत शांति कैसे समा गई।''

इस पर उसके मित्र ने उत्तर दिया–

''राजकुमार! शांति न लिफाफे में है, न काग़ज़ में है वह तो उस वाक्य में है जो काग़ज़ पर लिखा है जब राजकुमार ने काग़ज़ पर लिखे वाक्य को देखा तो उस पर लिखा था–**''शांति का निवास विवेक में है।''**

यह वाक्य पढ़कर राजकुमार को भी अनन्त शान्ति प्राप्त हो गई। इसी प्रकार जो भी कोई व्यक्ति इस वाक्य को पढ़ेगा और उस पर मनन और चिंतन और आचरण करेगा, उसे भी अनंत शांति प्राप्त हो जायेगी।

3. प्रसन्नता –

या तो दीवाना हँसे, या तू जिसे तौफ़ीक़ (शक्ति) दे।
वर्ना दुनियाँ में हँस सकता है कौन? –दाग़ देहलवी

ऋग्वेद में लिखा है–**ओ३म् विश्वदानीं सुमनसः स्याम।** –6.52.5

हम सदा आनंदित और प्रसन्न रहें।

वस्तुतः प्रसन्नता आंतरिक संतोष की एक स्वाभाविक छवि-छटा है। परन्तु आधुनिक काल में जिस प्रकार संसार की प्रत्येक वस्तु बनावटी हो गई है उसी प्रकार प्रसन्नता भी बनावटी हो गई है। जहाँ सहज प्रसन्नता होती है वहाँ सदा होठों पर खिलती हुई कली की सी मुस्कान अठखेलियाँ करती रहती

हैं। मुखड़ा फूल की भाँति खिला रहता है और शरीर के प्रत्येक रोम में आत्मसंतोष की छटा छिटकी रहती है। अतः सदा प्रसन्न रहने वाला व्यक्ति विश्ववाटिका का सुन्दर फूल बन जाता है।

संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति होते हैं एक तो चालमस्त। कई व्यक्तियों की चाल ही बड़ी मस्त होती है, दूसरे मालमस्त होते हैं, यदि धन आ गया तो प्रसन्न हो जाते हैं नहीं तो रोनी सूरत बनाये रखते हैं। इसके अतिरिक्त तीसरी प्रकार के व्यक्ति हर हाल में मस्त होते हैं जोकि प्रत्येक परिस्थिति में प्रसन्न रहते हैं। अतः प्रसन्न रहने के लिये हर हाल मस्त रहें। किसी हिनदी कवि ने कितना सुन्दर लिखा है–

जो हँसना हो तो फूलों सा, जो मुस्कराना हो तो कलियों सा।
जो आँसू हो तो मोती से, जो चेहरा हो तो चन्दा सा।।

वस्तुतः जो व्यक्ति भूत में रहता है वह मोह में रहता है और जो भविष्य में रहता है वह लोभ में रहता है परन्तु जो वर्तमान में रहता है वह कर्मयोगी है, क्योंकि वह मोह और लोभ से दूर रहता है। इसलिए उसे ही प्रसन्नता मिलती है। मुनिश्री तरुणसागर लिखते हैं–

हँसना पुण्य है। हँसना परमपुण्य है। जब आप हँसते हैं तो ईश्वर के लिए प्रार्थना करते हैं, मगर जब आप किसी रोते को हँसाते हैं तो ईश्वर आप के लिए प्रार्थना करता है। रोने में तो फिर भी आँसू लगते हैं, हँसने में तो वे भी नहीं लगते। फिर क्यों नहीं हँसते? हम हँसे, लेकिन हमारी हँसी मामा शकुनि की तरह कपटपूर्ण न हो बल्कि शिशु की तरह निश्छल / निष्पाप हो। वैसे सही मायने में दो ही लोग हँसते हैं–एक तो पागल और दूसरा परमहंस। बाकी लोग या तो रोते हैं या फिर हँसने का ढोंग करते हैं। कहो! कैसी रही।

–कड़वे प्रवचन (भाग-2) पृष्ठ 3

किसी अंग्रेजी कवि ने कितना सुन्दर लिखा है–

Happy the man and Happy he alone'
He who secures within himself can say
Tomorrow, do they worst, for I have lived today!

3. पवित्रता – पवित्रता दो प्रकार की होती है ।

(1) स्वच्छता– इसका संबंध बाह्य पवित्रता से है ।

(2) शुद्धता –इसका संबंध आंतरिक पवित्रता से है ।

शरीर के केश, त्वचा, नेत्र, नासिका, मुख, दंत आदि अंग सदा स्वच्छ रखने चाहिये । साफ पानी से एक बार प्रातः प्रतिदिन स्नान कीजिए । अपने घर की प्रत्येक वस्तु को और घर को साफ रखिये ।

यह सत्य है कि जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि होती है । अतः अपने दिल व दिमाग अपने व्यक्तित्व और कर्तृत्व अपनी कथनी और करनी, अपनी आजीविका, अपने आहार, विचार, आचार एवं व्यवहार को पवित्र रखिये । पवित्रता जीवन का सौंदर्य एवं शृंगार हैं । जैसेकि बाइबल में लिखा है–

Blessed are the pure in heart, For they shall see God.

शुद्ध हृदय व्यक्तियों का जीवन धन्य है क्योंकि वही प्रभुदर्शन के सच्चे अधिकारी हैं ।

4. समादर – जो व्यक्ति सबका आदर करता है, उस व्यक्ति का सब आदर करते हैं जो व्यक्ति किसी का आदर नहीं करता उसका कोई आदर नहीं करता । समादर एक ऐसी सुन्दर वस्तु है जो सब व्यक्तियों को मोह लेती है । छोटा सा बच्चा भी आदर से प्रसन्न और निरादन से खिन्न हो उठता हैं अतः हमें सबका समादर करना चाहिए चाहे वे बड़े हों या छोटे हों । आदर के बदले आदर करना तो संसार का सामान्य नियम है । आपकी बड़ाई इसमें है कि आप अनादर के बदले आदर करो । मित्रों से अधिक शत्रुओं का आदर करो । परिचितों से अधिक, अपरिचितों का आदर करो । आदर से शत्रु भी मित्र बन जाते हैं । क्योंकि किसी का भी आप को अनादर करने का कोई अधिकार नहीं है, अपितु आदर करने का सब लोगों का आपको अधिकार है । अतः मानव का आदर प्रभु का आदर है क्योंकि प्रत्येक मानव में परमात्मा निवास करता है । स्वामी विवेकानंद ने लिखा है–

It is chracter and behaviour that pays every where

चरित्र एवं व्यवहार का प्रत्येक स्थान पर मूल्य है ।

5. विनम्रता– वह व्यक्ति धन्य है जो विनम्रता के आभूषण से विभूषित है । वस्तुतः विनम्रता व्यक्ति के प्रत्येक गुण को सुशोभित कर देती है । परन्तु इसके विपरीत अहंकार व्यक्ति के प्रत्येक गुण को कुरूप बना देता हैं विनम्रता धनी के धन को जगमगा देती है । बलवान् के बल को चमका देती है, सुन्दर के सौन्दर्य को दमका देती है । विद्वान् की विद्या को चार चाँद लगा देती हैं । विनम्रता और अहंकार दोनों मिलकर एक स्थान पर कभी नहीं रह सकते हैं । जहाँ अहंकार होता है, वहाँ विनम्रता व भगवान् नहीं होते हैं । अहंकार का उन्मूलन विवेक से होता है । विवेकी सदा ही विनम्र रहता है । याद रखो–अभिमान ठोकर खिलाता है और अभिमानी ठोकर खाता है । विनम्र बचता है । अभिमानी से संसार घृणा करता है । विनम्र को संसार प्यार करता है । किसी हिन्दी कवि ने लिखा है–

नम्रता जिसमें नहीं उसमें नहीं कुछ पाया ।
नम्रता जिसमें भरी उसमें सब कुछ पाया ।।

जैसे–

कहो वही जो सच्चा हो, करो वही, जो अच्छा हो ।
बोलो वही जो मीठा हो, सुनो जो गीता हो ।
देखो, जो सत्यम् शिवम् सुन्दरम् हो ।
दिखाओ, जो दिव्य और भव्य हो ।
खाओ, वही जो प्रभु का प्रसाद हो ।
पिओ वही, जिसमें अमृत का स्वाद हो ।
चाल वही जिसमें सच्चरित्र हो और
कार्य वही करो जो पवित्र हो ।

थोड़ा पढ़ो चिन्तन ज़्यादा करो ।
थोड़ा बोलो, सुनो ज़्यादा ।
कम बोलो और काम का बोलो ।
जो नपा-तुला बोलता है,
उसका बोल दुनियाँ हमेशा याद करती है ।

मुनिश्री तरुणसागर (कड़वे प्रवचन, भाग-2) पृ. 103

अंतत इतना ही कहना काफी होगा कि उत्तम स्वभाव का मानव जीवन में अत्यधिक महत्व होता है और ऐसे स्वभाव वाला व्यक्ति ही अपने क्षेत्र में परम पूजनीय बन जाता है । इसी कारण स्वामी, विवेकानन्द ने लिखा है–

Money does not pay, nor name, fame does not pay nor learning. It is love that pays, it is character, that leaves its way through adamantine wall of difficulties.

धन, मान-सम्मान, विद्वता की कोई महत्ता नहीं है । यह प्रेम ही है जो कि मानव जीवन में महत्त्वपूर्ण है । यह चरित्र ही है जिसके द्वारा कठिनाइयों की अत्यंत मजबूत दीवारों गिर जाती हैं । इसके विषय में एक हिन्दी कवि ने कहा है–

निर्धन धनवान् से डरता है । निर्बल बलवान् से डरता है । ।
मूर्ख विद्वान् से डरता है । परन्तु चरित्रवान् से ये तीनों डरते हैं । ।

12. जीवन उपयोगी सामान्य बातें

1. क्रोध से बचने की कोशिश करें, यह जान लें कि क्रोध मूर्खता से शुरू होकर पश्चाताप् पर खत्म होता है ।
2. दूसरों की निंदा करने से खुद को बचाइये, दूसरों पर कीचड़ उछालने से हाथ अपने भी गंदे होते हैं और मन सदा अशांत रहता है (इसका तात्पर्य यह भी नहीं कि बुरे व्यक्ति के कुकर्मों की प्रसंशा की जाए)
3. कम खाना और कम बोलना सदैव लाभप्रद होता है ।
4. दोस्तो के साथ घुलिए-मिलिए और खुल कर हँसिए ।
5. दोस्ती अपने से बराबर वालों के साथ करें अच्छी संगत से सुख मिलता हैं ।
6. आशावादी बनने की कोशिश करें । क्योंकि आशावादी हर कठिनाई में अवसर ढूँढ़ लेता है और निराशावादी हर अवसर में कठिनाई देखता है ।
7. नियत समय पर हर कार्य करने की आदत डालिए । सूर्य उगने से पूर्व उठने से मन शांत रहता है ।
8. जो आप कर सकते हैं, सक्षम हैं, वही कार्य करें ।
9. जो आप नहीं कर सकते नहीं करना चाहते, खुद को बिल्कुल असक्षम महसूस करते हैं जबरन उस कार्य के पीछे ना पड़े, अपनी रुचि का कार्य चुनें ।
10. अच्छी पुस्तकों-पत्रिकाओं का अध्ययन करने से मन को अप्रत्यक्ष रूप में परम सुख की प्राप्ति होती है और खाली समय का सदुपयोग होता है ।
11. आप अपनी रुचि का कार्य अवश्य करें, चाहे उसमें सफलता न भी मिलें, किन्तु प्रयत्न करते रहिए और इसमें ही अपनी सफलता समझिए । अपनी भूल को सुधारने में और दूसरों से अच्छी बातें सीखने

में शर्म महसूस न करें ।

12. ग़लत कार्य करने के पीछे बची हुई खुशियों से हाथ धोना पड़ता है यह जान लें कि सुख प्राप्त करने का कोई खास सिद्धांत अथवा मशीन नहीं होती । खुशी तो हर एक मुट्ठी में है अभाव ग्रस्त व्यक्ति भी सुख प्राप्त कर सकता है । साधन सम्पन्न व्यक्ति भी उस सुख से वंचित रह सकता हैं ।

13. जितना कुछ प्राप्त हो, उसे ही अपनी उपलब्धि मानें । शास्त्र भी कहता है कि सब से बडा आत्मसुख है किन्तु प्रयत्न करने से कतराएं नहीं । क्योंकि कर्म करने के बाद जैसा भी फल मिले क़िस्मत के नाम पर संतोष मिलता है । सिर्फ क़िस्मत के नाम पर बैठे रहने से, अपने ही किये गए कर्मों के प्रति अपराधजनक भावनाएं जन्म लेती हैं ।

14. अपनी इच्छाओं को सीमित ही रखें क्योंकि इनका अन्त नहीं और हर एक के लिए हर चीज सम्भव नहीं ।

15. मृत्यु के भय को दूर करें, यह जान लें कि एक दिन सबको मरना हैं, फिर ज़िन्दगी जीना है, उस सुखमय क्षण को भी मुत्यु के भय से क्यों बर्बाद किया जाए ?

16. हम जो कुछ भी प्राप्त करते हैं, इस समाज में ही और मरने के पश्चात् सब कुछ यहीं छोड़ जाते हैं । फिर अनैतिक ढग से, ग़लत तरीके से, सब कुछ हासिल करने का दंभ पालने से क्या फायदा ? इस तरह के अनेक श्लोक, जो गीता जैसे महान् धार्मिक ग्रन्थों में हैं, उसका मनन करें । कुछ समय संध्यावन्दन में लगाने से भी मन को शान्ति मिलती हैं ।

17. यदि आप लेखक नहीं है तो, नियमित तौर पर डायरी लिखने की आदत डालें । यह माध्यम कभी-कभी अशान्त मन की वेदनाओं को पन्नों पर उतार कर बहुत राहत दे जाता हैं ।

18 एक योग्य जीवन साथी का साथ अवश्य रखें और पतिव्रता स्त्री से बढ़कर कोई दूसरा सच्चा साथी नहीं होता ।

19. रुढ़िवादिता, जातीयता, सामाजिक विसंगतियों अंधी परम्पराओं से स्वयं को जितना अलग रखेगें, मन को उतना ही सुख शांति मिलेगी ।

20. स्वस्थ रहकर ही स्वयं को खुश रखा जा सकता है । अतः स्वस्थ रहने के तौर तरीके अपनाएं, तथा चिंता कभी न करें । चिंता ही सारी बीमारी की जड़ है । जब आप बहुत चिंतित हों, तब खुद को अपनी रुचि के कार्यों में व्यस्त रखें । कहावत है चिन्ता, चिता समान है ।

21. सुख पाने के लिए सामजंस्य जरूरी है । पाने के लिए देना भी सीखना चाहिए ।

22. आप संकल्प करें कि—आज से खुशी ही मेरे लिए सबसे बडी चीज होगी । इस खुशी के लिए जो मन भाए सो करें ।

23. मन मस्तिष्क पर सुख रस को हावी होने दें, ज़िंदगी की या दूसरों की देखा-देखी, सुनी-सुनाई या पढ़ी, विकृतियों को परे हटाकर जहाँ-तहाँ खूबसूरती, मिठास, अच्छी बातें ढूँढें । अखबारों में अपराध समाचार पढना छोड़कर, लोगों की उपलब्धियों के बारे में पढिए, उनसें प्ररेणा लें ।

24. आत्मा की पुकार को सुनें । कुछ क्षण सिर्फ भीतर झांक कर अकेले ही जाएं, सबसे हट जाएं । कभी-कभी एकान्त और मौन बड़ा सुख देता है ।

25. किसी को मिलने से पहले नमस्ते करने में कजूंसी न करें । इससे सौहार्द्र बढेगा, लोकप्रियता बढ़ेगी, मान-सम्मान, प्यार मिलेगा और इन सबसे खुशी मिलेगी ।

26. खुशी के लिए विशेष योजना बनाना और न मिलने पर निराश होना बड़ा कष्टदायक होगा । इसलिए खुशी हो जहाँ-जहाँ से आने दें, बलपूर्वक घसीटे नहीं ।

27. मुझे जीवन में बचपन से लेकर आज तक कभी सुख नहीं मिला-ऐसा कहने वाले अपने दुःख को बढ़ाते हैं, यह एक ढ़कोसला है । आगे या वर्तमान में सुख भोगने, खुश रहने से किसी ने रोका हैं उन्हें ?

28. स्वयं से प्यार करें । हीनता को हावी न होने दें ।

29. ईर्ष्या न करें । मखमल के गद्दों पर सोने पर और करोड़ों रुपये रहने पर भी ईर्ष्या की पीड़ा सुखी न रहने देगी ।

30. अपनी असफलताओं के अतीत को, अभिभावकों को दोष न देकर, स्वयं प्रयास करें कि कुछ पा सके ।

31. जीवन के अंधियारे पक्ष में हिम्मत न हारें । खुशी का सूरज निकलेगा यह सच हैं ।

32. दूसरों के प्रति सहृदय रहें ।

33. यह भी याद रखें—खुशी एक नन्हीं-सी चिडिया है । झपट कर पकड़ना चाहोगे तो उड़ जाएगी । प्यार से पुचकार कर निमंत्रण देंगें तो आपकी हथेली पर आ बैठेगी ।

34. कम बोलिए, जरूरत न हो तो बिल्कुल मत बोलें ।

35. मनचाही वस्तु न मिलने पर क्रोध न करें ।

36. अपनी धन-सम्पति का बार-बार उल्लेख न करें ।

37. बहू-बेटियों के कार्य में दखल न दें, बल्कि अपने स्वास्थ्य के सामर्थ्य के अनुसार बहू -बेटियों के कार्य में सहयोग करें ।

38. यह आशा न करें कि बहू-बेटे हर काम मुझसे पूछ कर करें ।

39. अपनी जिन्दगी एक रूटीन में जीये ताकि परिवार वाले अच्छी तरह से आपकी देख-भाल कर सकें ।

40. खाने-पीने में संतोषी रहें जो मिल जाए उसे प्रभुप्रसाद समझकर ग्रहण करना चाहिए और प्रभु का धन्यवाद करें ।

41. किसी पर अपनी इच्छा थोपने की कोशिश न करें न ही अपनी हर बात मनवाने की कोशिश करें ।

42. दिन भर बीमारी का रोना न रोए । बुढ़ापे के कष्ट व बीमारी को कर्मफल समझकर खुशी-खुशी सहन करें । हर काम होने में समय लगता है ।

43. अतः बोलते ही मेरा काम हो जाए इसके लिए शोर न मचाएं ।

44. अपने घर की एवं घर के लोगों की बुराई न करें । नहीं तो यह आदत बन जाएगी ।

45. जो भी बात किसी से पूछनी हो तो एकदम संक्षेप में पूछें । बार-बार एक ही बात पूछने पर लोग आप की बात का ध्यान देना कम कर देंगे ।

46. बहू-बेटियों के कटु वचन सुनकर शांत हो जाए और कोई प्रत्युतर न दें । बहू-बेटियों एवं उनके बच्चों से प्रेम का व्यवहार करें ।

47. प्रभु का स्मरण अवश्य करते रहें । प्रसन्न व आनंद में रहकर बुढ़ापे का जीवन जीयें ।

48. अपने परिवार की समस्यांए दूसरों के सामने न रखें न ही किसी की शिकायत करें ।

49. अपने बीते दिनों के गुणगान एवं अपनी तारीफ दिन-रात न करें ।

50. परिवार के लोग मन से आप की बीमारी का इलाज करवा रहे है तो उसमें सहयोग करें और दखल अंदाजी न करें ।

51. प्राकृतिक जीवनशैली अपनाएं एवं खाने-पीने से पूरा पहरेज करें ।

52. बच्चों के उम्रदराज होने पर उनके बताने व जानकारी देने को ही उनके द्वारा पूछना ही समझें ।

53. खाली हाथ ही आए थे और खाली हाथ ही जाना है, प्रेम से रहकर सबसे रिश्ता निभाना हैं ।

54. इंसान की सोच अगर कम हो जाती है तो यह खूबसूरत ज़िन्दगी भी एक जंग हो जाती है ।

55. शाश्वत् जीवन के मूल आधार

घड़ी	:	समय मत गवांओ
समुद्र	:	विशाल दिल रखो
चींटी	:	निरन्तर कर्म करते रहो
वृक्ष	:	परोपकारी बनो
धरती	:	सहनशील बनो
सूर्य	:	निरन्तरता बनाये रखो
गुलाब	:	दुःख मे भी खुश रहो
दीपक	:	दूसरो को रोशन करो
कर्त्ता	:	वफ़ादार बनो
कोयल	:	मीठा बोलो
कौआ	:	चतुर बनो
आनन्द के लिए	:	संगीत
खाने के लिए	:	ग़म
पीने के लिए	:	क्रोध
निगलने के लिए	:	अपमान
व्यवहार के लिए	:	नीति
लेने के लिए	:	ज्ञान
देने के लिए	:	दान
जीतने के लिए	:	प्रेम
धारण के लिए	:	धैर्य
तृप्ति के लिए	:	संतोष
त्यागने के लिए	:	क्रोध
करने के लिए	:	सेवा
प्राप्त करने के लिए	:	यश
फैकने के लिए	:	ईर्ष्या
छोडने के लिए	:	मोह

रखने के लिए : इज़्ज़त

बोलने के लिए : सत्य

56. हिन्दी वर्णमाला का जीवन सन्देश..... क–ज्ञ

क : क्लेश मत करो

ख : खराब मत करो

ग : गर्व न करो

घ : घमण्ड मत करो

च : चिंता मत करो

छ : छल-कपट मत करो

ज : जवाबदारी निभाओ

झ : झूठ मत बोलो

ट : टिप्पणी मत करो

ठ : ठगाई मत करो

ड : डरपोक मत बनो

ढ : ढोंग न करो

त : तुच्छ मत बनो

थ : थको मत

द : दिलदार बनो

ध : धोखा मत करो

न : नम्र बनो

प : पाप मत करो

फ : फालतू के काम मत करो

ब : बिगाड मत करो

भ : भावुक बनो

म : मधुर बोलो

य : यशस्वी बनो

र : रोओ मत

ल : लोभ मत करो

व	:	वैर मत करो
श	:	शत्रुता मत करो
ष	:	षटकोण की तरह स्थिर रहो
स	:	सच बोलो
ह	:	हँसमुख रहो
क्ष	:	क्षमा करो
त्र	:	त्रास (भय) मत करो
ज्ञ	:	ज्ञानी बनो

13. तनावमुक्त जीवन के सूत्र

1. जीवन छोटा है । तनावग्रस्त रहकर इसे और छोटा न बनायें ।
2. बहुत अधिक महत्वाकांक्षी न बनें । इसमें कुण्ठित होने की संभावना अधिक रहती है ।
3. आने वाली समस्याओं को देखने का दृष्टिकोण बदलें अर्थात् सकारात्मक परिणाम की आशा करें ।
4. दूसरों से आशा मत करें, दूसरों की आशा भरसक पूरी करें, नक़द शांति मिलेगी, लोगों से स्नेह मिलेगा ।
5. जीवन की हर एक घटना से किसी न किसी रूप से आपको लाभ ही होता है । परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप से होने वाले लाभ के बारे में ही सदैव सोचिए ।
6. आप अपने जीवन की तुलना अन्य के साथ कर चिन्तित न हों ।
7. आप दुःख पहुँचाने वाले संबंधी, पडौसी, परिचित को क्षमा कर दो तथा उसे भूल जाओ । जितना अधिक आप क्षमा करेंगें उतना अधिक आप तनाव मुक्त रहेंगें ।
8. सभी समस्याओं को एक साथ सुलझाने का प्रयत्न करके उलझें नहीं । एक समय पर एक ही समस्या का समाधान करें ।
9. अकेले मत रहें, अकेला व्यक्ति छोटी-छोटी बातों से जल्दी परेशान हो जाता है । अपनी दुनियाँ में खोये रहने के स्थान पर औरों के लिए कुछ करें । इससे आपका प्रेम बढ़ेगा ।
10. जीवन का उद्देश्य तय करें । फिर उसें हिस्सों में समयबद्ध करके प्राप्त करने का पूरा प्रयास करें । हर समय उद्देश्य को प्राप्त करने के बारे में ही सोचें, इससे आप की शक्तियाँ सही दिशा में कार्य करेंगी ।
11. अपने कार्य की प्राथमिकता तय करें । पहले महत्त्वपूर्ण कार्यों का

निपटान करें, नहीं तो उनकी चिंता तनाव को अनावश्यक रूप से बढ़ायेगी ।

12. कमजोर होना, छोटा होना, अभावग्रस्त होना अभिशाप नहीं । जीवन की उपलब्धियों को देखें, कमियों को नहीं । शेख शादी नंगे पैर नवाज पढ़ने जा रहा था । अल्लाह को कोस रहा था, कि उसके पास जूते खरीदने के लिए भी पैसे नहीं है । थोड़ी देर चलने के बाद उसने देखा कि आगे एक व्यक्ति जा रहा था, उसके पैर ही नहीं थे । तब उसने परमात्मा को धन्यवाद किया कि वह बहुतों से अच्छा है ।

13. उत्साही व्यक्तियों के साथ रहें, आप में भी उत्साह आयेगा । एक घण्टा योग, ध्यान, सैर आदि अवश्य करें, इससे आप पूरा दिन स्फूर्ति एवं प्रसन्नता अनुभव करेंगें ।

14. दूसरों के दुःख को बड़ा समझें, अपने दुःख की परवाह मत करें, आप की चिताँए दूर हो जायेंगी ।

15. भूतकाल में की हुई गलतियों का पश्चाताप न करें, भविष्य की चिंता न करें । वर्तमान को सफल बनाने के लिए पूरा ध्यान दीजिये । आज का ही दिन आप के हाथ में है । आज आप रचनात्मक कार्य करेंगें तो कल की गलतियाँ मिट जायेंगी और भविष्य में अवश्य लाभ होगा ।

16. आप अपने जीवन की तुलना अन्य के साथ कर चिन्तित न हों । तुलना करने से ही हीनभावना आती है । स्वयं में विश्वास रखें कि आप एक अनोखे और विशेष व्यक्ति हैं । इस विश्व में आपके जैसा और कोई नहीं है ।

17. जिस परिस्थिति को आप बदल नहीं सकते उसके बारे में सोच कर दुःखी न हों । याद रखिये कि समय एक श्रेष्ठ दवाई है जो सब घावों को भर देता है ।

18. ईश्वर से प्रतिदिन प्रार्थना करें, प्रार्थना में शक्ति है । प्रार्थना करने से

मन असीम शीतलता का अनुभव करता है । खुशी देने से खुशी बढ़ती है । प्रेम करने से ही प्रेम मिलता हैं । यदि आप किसी से प्रेम नहीं करेगें तो इस भूल में मत रहना कि कोई आप से प्रेम करेगा ।

19. दिन में चार-पाँच बार अपने संकल्पों को साक्षीभाव से देखने का अभ्यास करें, यह चिन्ताओं से मुक्त करने में सहायक होता है । अपने मन से सदैव अच्छे-अच्छे भाव व संकल्प रखें ।

20. आप अपनी सभी चिन्ताएँ परमपिता परमात्मा को सर्मपण कर दें । वही सबसे उत्तम सहारा है, जो इस सत्य को जानता है वह भय, चिन्ता, शोक से सर्वदा मुक्त हो जाता है ।

21. अपने विशेष मित्रजनों तथा संगी-साथियों को कहिए, आप मेरे सच्चे मित्र हैं आई लव यू । शायद आपने पहले कभी ऐसा न कहा हो । लेकिन इससे आपके तथा उनके जीवन में बडा अन्तर आ जायेगा ।

22. प्राणायाम अथवा लम्बे सांस लेने को अपनी दिनचर्या का अंग बनायें । यदि हम प्राणायाम की सहायता से सांस लेने के प्रति जागरूक रहेंगे तो स्मरण शक्ति बढेगी ।

23. जीयो और जीने दो । इसी सूत्र को अपनाने से विश्व में सुख, शान्ति, समृद्धि आयेगी और आतंकवाद समाप्त हो जायेगें ।

24. **अपने विचारों को वश में रखो**
क्योंकि यही तुम्हारी वाणी बनेंगे ।
अपनी वाणी को वश में रखो
क्योंकि यही तुम्हारा कर्म बनेगी ।
अपने कर्मो को वश में रखो
क्योंकि यही तुम्हारी आदत बनेंगे ।
अपनी आदतों को वश में रखो ।
क्योंकि यही तुम्हारा चरित्र बनेगें ।

और अपने चरित्र को वश में रखो ।
क्योंकि इसी से तुम्हारा भाग्य बनेगा ।

25. जीवन में तनावमुक्त रहने के लिए निम्नलिखित सूत्र को उतारें–

बोल सको तो मीठा बोलो, कटु बोलना मत सीखो ।
लगा सको तो बाग लगाओ आग लगाना मत सीखो ।
जला सको तो दीप जलाओ दिलों को जलाना मत सीखो ।
मिटा सको तो अहं मिटाओ, प्रेम मिटाना मत सीखो ।
बिछा सको तो फूल बिछाओ, शूल बिछाना मत सीखो ।
बता सको तो सुपथ बताओ, पथ भटकाना मत सीखो ।

14. सुखी कौन?

1. सकारात्मक सोच – मानव जीवन में सुखी रहने का पहला सूत्र है कि व्यक्ति की सोच सकारात्मक होनी चाहिये। यदि आप ऐसा करते हैं तो आप की 90% समस्याओं का समाधान हो जायेगा। जैसे पानी का गिलास आधा खाली हुआ है। जिस व्यक्ति की नकारात्मक रुचि है। वह कहेगा कि पानी का गिलास आधा खाली है। परन्तु इसके विपरीत जिस व्यक्ति की सोच सकारात्मक है वह कहेगा कि पानी का गिलास आधा भरा हुआ है। जिस व्यक्ति की सकारात्मक रुचि होती है वह सदा संतुष्ट और शांत रहता। अतः वह सदा दुःख में भी सुख को ढूंढा है वह सदा गुनगुनाता है।

God is in His Heaven
All is right with world –Robert Browing

2. सदा प्रभु की रजा में रहना – व्यक्ति को सुखी रहने के लिये सदा प्रभु की रजा में रहना चाहिये। यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो वह कभी भी सुखी नहीं रह सकता है। जैसे एक कवि के शब्दों में–

न मैं यह चाहता हूँ न वह चाहता हूँ।
बस अपने प्रभु की रजा चाहता हूँ।।

3. वर्तमान में रहना – एक अंग्रेज़ी लेखक ने लिखा है–

Past is experience, present is experiment
and future is expectation.

सुखी रहने के लिए व्यक्ति को सदा वर्तमान काल में रहना चाहिये क्योंकि भूत गुजर चुका है जोकि कभी नहीं आयेगा और भविष्य सर्वथा अज्ञात है। परन्तु हमें भूत से अनुभव प्राप्त करना चाहिए और भविष्य के लिए योजना बनाकर वर्तमान में रहना चाहिये तभी हम सुखी रहेंगे। जैसे पूर्व राष्ट्रपति श्री अब्दुल कलाम ने लिखा है–

Past is a tissue paper, present is a news paper and future is a question paper.

भूतकाल रद्दी काग़ज़ के समान है, वर्तमान कुछ नया करने का समाचार है और भविष्य के लिये अच्छी योजना बनाना है ।

4. प्राप्त ही पर्याप्त समझना – सुखी रहने के लिये यह परमावश्यक है कि परमात्मा ने हमें जो कुछ दे रखा है उसमें संतुष्ट रहना चाहिये । जैसे किसी व्यक्ति के पास 90 रुपये हैं तो उसमें संतुष्ट रहना चाहिये । परन्तु आलस्य को त्याग कर उन्हें 100 रुपये बनाने का प्रयत्न करना चाहिये । यदि आप ऐसा नहीं करते तो जीवन में कभी भी सुखी नहीं रह सकते । परन्तु दुर्भाग्यवश व्यक्ति को जो कुछ मिला है उससे वह संतोष नहीं करता जो नहीं है उसके लिए दुःखी रहता है । हमें किसी भी व्यक्ति की किसी दूसरे व्यक्ति से तुलना नहीं करनी चाहिए क्योंकि संसार का प्रत्येक व्यक्ति बेजोड़ है तभी हम खुश रह सकते हैं । इसके विषय में मैं आपकी सेवा में निम्नलिखित ''जीवन में खुशी का राज'' नामक दृष्टांत प्रस्तुत करना चाहता हूँ ताकि आप अपने जीवन में खुशी रह सकें ।

जंगल में एक कौआ रहता था जो अपने जीवन से पूरी तरह संतुष्ट था । एक दिन उसने बत्तख देखी और सोचा, ''यह बत्तख कितनी सफेद है और मैं कितना काला । यह बत्तख तो संसार की सबसे ज़्यादा खुश पक्षी होगी ।''

उसने अपने विचार बत्तख को बताए । बत्तख ने उत्तर दिया, ''दरअसल मुझे भी ऐसा ही लगता था कि मैं सब से अधिक खुश पक्षी हूँ जब तक मैंने दो रंगों वाले तोते को नहीं देखा था । अब मेरा ऐसा मानना है कि तोता सृष्टि का सबसे अधिक खुश पक्षी है ।''

फिर कौआ तोते के पास गया । तोते ने उसे समझाया, ''मोर के मिलने से पहले तक मैं भी एक अत्यधिक खुशहाल ज़िन्दगी जीता था लेकिन मोर को देखने के बाद मैंने जाना कि मुझ में तो केवल दो रंग हैं जबकि मोर में विविध रंग हैं ।''

तोते को मिलने के बाद वह कौआ चिड़ियाघर में मोर से मिलने गया

और बोला, ''प्रिय मोर, तुम तो बहुत खूबसूरत हो। तुम्हें देखने रोज़ हज़ारों लोग आते हैं। मेरे अनुमान से तुम धरती के सबसे अधिक खुश पक्षी हो।''

मोर ने जवाब दिया, ''मैं हमेशा सोचता था कि मैं ही सबसे खूबसूरत हूँ लेकिन मेरी इस सुन्दरता के कारण ही मैं इस चिड़ियाघर में फंसा हुआ हूँ। मैंने चिड़ियाघर का बहुत ध्यान से परीक्षण किया और तब मुझे यह अहसास हुआ कि इस पिंजरे में केवल कौए को ही नहीं रखा गया है। इसलिए पिछले कुछ दिनों से मैं इस सोच में हूँ कि अगर मैं कौआ होता तो मैं भी खुशी से आकाश में घूम सकता था।

यह कहानी इस संसार में हमारी परेशान्यिों का सार प्रस्तुत करती है। कौआ सोचता है कि बत्तख खुश है, बत्तख को लगता है कि तोता खुश है, तोता सोचता है कि मोर खुश है जबकि मोर को लगता है कि कौआ सबसे खुश है।

इससे हमें यही शिक्षा मिलती है कि दूसरों से तुलना हमें सदा दुःखी करती है। हमें दूसरों के लिए खुश होना चाहिए तभी हमें भी खुशी मिलेगी। हमारे पास जो है उसी में हमें सदा खुश रहना चाहिए। वस्तुतः संतोष ही मानव जीवन का सर्वोत्तम धन है जैसे एक उर्दूशायर के शब्दों में–

आदमी कितना अंधेरे में खोया है।
हथेली पर मुक़द्दर तलाश रहा है।
प्यास बुझती है पानी की दो चार बूदों से।
हवस इतनी है कि समुद्र तलाश करता है।

निष्कर्षतः हमें जीवन को सुखी बनाने के लिये भौतिकवाद एवं आध्यात्मवाद, परिश्रम एवं पुरुषार्थ का सुन्दर समन्वय करना होगा और अपनी इच्छाओं का वैज्ञानिक विश्लेषण भी करना होगा। सुखी जीवन के लिये प्रत्येक व्यक्ति को शारीरिक रूप से स्वस्थ, आर्थिक रूप से सम्पन्न, मानिसक रूप से संतुष्ट एवं शांत, बौद्धिक रूप से जागरूक और आत्मिक रूप से पवित्र एवं पावन होना चाहिये। आनन्द और दया के फव्वारे बनकर प्रेम,

सूझबूझ और कृपा की वर्षा करो। हमें सच्चा आनन्द तो उसी स्रोत से प्राप्त होता है, जिसने हमें अस्तित्व दिया है—अर्थात् वह सर्वशक्तिमान परमात्मा। वही हमारी मुक्ति का साधन है, वही हमारा दैविक प्रेम है वही हमारी आंतरिक पूर्णता का स्रोत है। उसी स्रोत में से आंतरिक आनन्द का उद्‌गम निकलता है। पूर्ण सुख की बात तो कोरा आदर्शवाद है, क्योंकि हृदय की इच्छाएं कुछ भी पाकर शांत नहीं होती, क्योंकि हृदय तो प्रभु को पाने के लिये बना है। कवि 'सेवक' ने लिखा है कि सच्चा सुख (आनन्द) संसार में नहीं है—

न इस संसार में सुख है, और न परिवार में सुख है।
न सुख है नौकरी में, और न कारोबार में सुख है।।
न कोठी में, न बंगले में, न मोटरकार में सुख है।
न हीरे मोती, सोना चाँदी के भण्डार में सुख है।।
न ऐश में, न कैश में, न मौज बहार में सुख है।
न कुर्सी में, न लीडरी में, न राजदरबार में सुख है।।
ऐ 'सेवक' कहीं नहीं इस दुनियाँ के बाज़ार में सुख है।
अगर सुख है तो उस प्यारे प्रभु के प्यार में सुख है।।

लेखक द्वारा प्रकाशित एवं निःशुल्क वितरित पुस्तकों की सूची :–

1. रामचरितमानससार
2. गीतासार
3. उपनिषद्सार
4. सत्यार्थप्रकाशसार
5. भक्ति
6. सुखीजीवन
7. आत्मबोध
8. वेदवाणी
9. वैदिकसाहित्य
10. अमृतवाणी
11. महर्षि दयानंद
12. स्वामी विवेकानंद
13. शरणागति
14. वैदिक रामायण
15. क्या आप जानते हैं ?
16. शेंर-ओ-शायरी
17. ओ३म्
18. गायत्रीरहस्य

लेखक द्वारा अप्रकाशित पुस्तकों की सूची :–

1. वैदिक मनुस्मृति
2. वैदिक उपनिषद्वाणी
3. वैदिक दर्शनवाणी
4. वैदिक महाभारत
5. वैदिक गीता
6. अमर धर्मग्रंथ
7. अमर नीतिग्रंथ
8. पुराणपरिचय
9. ईश्वरसिद्धि
10. राष्ट्रभाषा हिन्दी
11. मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम
12. महावीर हनुमान
13. योगिराज श्रीकृष्ण
14. आदिशंकराचार्य
15. आचार्य चाणक्य
16. दस गुरु
17. आर्यसमाज के महामानव
18. स्वामी रामतीर्थ
19. संस्कार
20. गीतांजलि
21. आर्यसमाज
22. ज्ञानामृत
23. यज्ञ
24. संत
25. संतवाणी
26. आत्मकथा
27. भतृहरिशतक
28. ब्रह्मचर्य
29. गृहस्थ
30. सामान्य हिन्दी (भाग I-II) (सब कक्षाओं के लिये)
31. धर्म
32. कर्म
33. मन
34. सुखी कौन?
35. भारत के क्रांतिकारी
36. भारत के भक्त
37. Great Thoughts
38. Great Indians
39. Great Thinkers
40. Great Scientists
41. General English (Part I to V) (For All Classes)

कृपया पाठकगण इस ओर भी ध्यान दें कि इनकी निम्नलिखित पुस्तकों को इनकी वैब साईट **www.dpkapoorbooks.co.in** पर भी देखा जा सकता है।

1. अमृतवाणी
2. आर्यसमाज
3. आर्यसमाज के महामानव
4. आदिशंकराचार्य
5. आचार्य चाणक्य
6. अमर नीतिग्रंथ
7. अमर धर्मग्रंथ
8. दस गुरु
9. ईश्वरसिद्धि
10. गायत्रीरहस्य
11. ज्ञानामृत
12. गीतांजलि
13. क्या आप जानते हैं ?
14. मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम
15. महावीर हनुमान
16. महर्षि दयानंद
17. ओ३म्
18. पुराणपरिचय
19. राष्ट्रभाषा हिन्दी
20. संस्कार
21. संत
22. संतवाणी
23. स्वामी विवेकानंद
24. स्वामी रामतीर्थ
25. शरणागति
26. शेर-ओ-शायरी
27. सामान्य हिन्दी (भाग **I-II**) (सब कक्षाओं के लिये)
28. वैदिकसाहित्य
29. वैदिक उपनिषद्वाणी
30. वैदिक दर्शनवाणी
31. वैदिक रामायण
32. वैदिक महाभारत
33. वैदिक गीता
34. योगिराज श्रीकृष्ण
35. यज्ञ
36. आत्मकथा
37. भर्तृहरिशतक
38. ब्रह्मचर्य
39. गृहस्थ
40. वैदिक मनुस्मृति
41. धर्म
42. कर्म
43. मन
44. सुखी कौन?
45. भारत के क्रांतिकारी
46. भारत के भक्त
47. **Great Thoughts**
48. **Great Indians**
49. **Great Thinkers**
50. **Great Scientists**
51. **General English (Part I to V) (For All Classes)**